# रसगन्धर्व

मणि मधुकर

राधाकृष्ण प्रकाशन

द्वितीय आवृत्ति : १९७८

मूल्य : ११ रुपये

प्रकाशक
राधाकृष्ण प्रकाशन
२ अंसारी रोड, दरियागंज,
दिल्ली-११०००६

मुद्रक
शान प्रिन्टर्स
रोहतास नगर, शाहदरा
दिल्ली-११००३२

आदरणीय भाई
नेमिचन्द्र जैन के हाथों में

क्रम

पात्र

अ
ब
स
द
लेखक/अफ़सर/सन्तरी
युवती

'रसगन्धर्व' का प्रथम मंचन मध्यप्रदेश कला परिषद द्वारा आयोजित रंग शिविर की ओर से १ दिसम्बर, १९७३ को रवीन्द्र भवन, भोपाल में हुआ।

निदेशक थे—श्री ब० व० कारन्त।

## पात्र

अ : राजीव वर्मा
ब : मुकेश शर्मा
स : वेणु गोपाल
द : राकेश विद्रुआ
लेखक : चन्द्रकान्त पांढरी पांडे
अफसर : बुरेश थोकार
सन्तरी : माधव टोकेकर
युवती : शुक्ला दासगुप्त

## नेपथ्य

मंच-व्यवस्था : प्रदीप देव
वेश-भूषा : प्रेमा कारन्त, दीपा घोष
रंग-सज्जा, प्रकाश-योजना : राममूर्ति, राजेन्द्रसिंह
प्रवाचक : अरुण वाजपेयी, सन्तोषकुमार चौरसे

### संगीत-मण्डली

पापिया दासगुप्त, सुलता दासगुप्त, रजनी विग, भानु चन्दवासकर, सुनील राव, देवेन्द्र सक्सेना, वि० दत्ता, कल्पना चन्द्रा, चन्द्रारानी सक्सेना, रईस हसन, सुधाकर सूबेदार।

# पूर्वार्द्ध

मंच दो भागों में बँटा हुआ है। पीछे, जेल का एक सुरंगनुमा हिस्सा। तीन ओर दीवारें, भद्दी और ऊँची। पलस्तर उखड़ा हुआ। प्रकाश उभरते ही आलों में उथल-पुथल घोंसले नजर आते हैं।

आगे के मंच पर, बायीं ओर, कुछ 'गन्दे' दर्शक कचरे का ढेर लगा रहे हैं। राख, तिनके, फटे हुए अखबार और दूसरी रद्दी चीजें। दाहिनी तरफ़, कुछ अन्य 'सम्भ्रान्त' दर्शक फूलों वाले गमले सजा रहे हैं। सजावट और गंदगी बिखेरने की इस होड़ के साथ एक कोने में बैठी हुई गायक-मंडली भक्ति, निर्माण एवं घृणा के मिले-जुले स्वर दुहराती रहती है। थोड़ी देर बाद 'गन्दे' और 'सम्भ्रान्त' दर्शक प्रेक्षागृह में अपना-अपना आसन ग्रहण कर लेते हैं।

सब-कुछ मन्द अँधेरे में डूब जाता है। कहीं कोई मुर्गा बांग देता है। कुछ देर बाद, जेल का घड़ियाल घनघनाता है। धीरे-धीरे अँधेरा छँटने लगता है। सुबह की रोशनी फूटती है। अ, ब, स, द सो रहे हैं, कुछ ऊबड़-खाबड़ ढंग से। अचानक अ चौंककर जाग पड़ता है। वह एक बार आँखें खोलता है, फिर घबरा कर बन्द कर लेता है। उसका चेहरा भय और पसीने से तर है। आवाज़ जैसे गले में रुक गयी है।

अ : (यकायक चिल्लाकर)
जागो राजा भोज
जागो गंगू तेली
खून, चारों तरफ खून—
काला खून, हरा खून, नीला खून, पीला खून।

ब : (जागकर) चोप्प ! सुबह उठते ही खून पीने लग गया है, स्साला !

अ : (विक्षिप्त-सा) साले का खून चाबी-ताले का खून,
दाल में काले का खून।
कमली वाले का खून, इमली वाले का खून।
गोरे का खून, काँच-कटोरे का खून।

त्रिन पानी सब खून—खून—खून—
काला खून, गोरा खून।
जागो, जागो, लड़ाई शुरू हो चुकी है।
भागो, राजा भोज !
उठो, गंगू तेली !

**गायक-मंडली भी अ के शब्दों को हवा में उछालती है।**

**स और द आँखें मलते हुए उठते हैं।**

स : कौन है राजा भोज ?

द : कौन हरामी कहता है कि मैं गंगू तेली हूँ ? मैंने न कभी तिल देखे, न तेल की धार देखी।

अ : क्या तुम लड़ना जानते हो ? लड़ाई शुरू हो चुकी है...।
गीला खून—ढीला खून—सूखा खून—भूखा खून।

ब : अबे, मैन के भडुवे, कहाँ हो रही है लड़ाई ? तेरे जाँघिये मे ?

स : नीद मे। बेचारे ने कोई बुरा सपना देखा है।

द : तभी शक्ल सिराजुदौला जैसी बना रखी है।

अ : मैं किसी सिराजुदौला को नही जानता।

ब : लेकिन वह तुम्हें तो जानता ही होगा।

द : तुम्हें देखकर कोई भी कह सकता है कि यह आदमी सीधा इतिहास में से निकलकर आया है।

अ : **(विरोध करता हुआ)** मैं इतिहास मे से नही निकला।

ब : **(द से)** हो सकता है, यह भूगोल में से निकला हो।

स : या अर्थशास्त्र मे से।

ब : या तानपूरे में से।

स : धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—कही से भी निकल सकता है यह आदमी, बस एक सूराख मिलने की देर है।

द : काफ़ी चिन्तन और मनन के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि यह...।

ब : संस्कृत मे से निकला है और हिन्दी मे घुस गया है।

स : नही, चूहे के बिल में से निकला है और साँप की बाँबी में घुस गया है।

द : गलत, बिलकुल गलत। सुनो !

ब, स : सुन रहे है।

द : **(अ के कंधे पर हाथ रखकर)** इतना तो तय हो ही चुका है कि यह एक रहस्यमय प्राणी है।

स : प्राणी ?

ब : हाँ, यह किसी के भी प्राण पिंजरे में बन्द कर सकता है।

अ : (अविचलित भाव से आगे देख रहा है)

द : तो हमें यह मानकर चलना चाहिए कि यह सरकारी गज़ट में से निकला है और बजट मे घुस गया है।

अ : कमीने!

द : गाली मत दो।

अ : चुगद!

स : देखो, तुम हद से बाहर जा रहे हो।

अ : सुअर की औलाद!

ब : अगर आगे तुमने एक शब्द भी कहा तो मैं थोबडा तोड़कर पाँवों में डाल दूँगा।

**सहसा बंदूक छूटने की आवाज़ आती है।**

द : (सकपकाकर) गोली!

अ : विस्फोट! लड़ाई शुरू हो चुकी है। फोड़े मे से खून निकल रहा है।

स : गोली चल रही है। (ब से) तुमने बंदूक की आवाज सुनी?

ब : यह भी तो संभव है कि राजा जंगल में शिकार खेलने आया हो और...।

द : उसने किसी जानवर पर गोली चला दी हो।

स : लेकिन जंगल कहाँ है?

ब : यही कहीं होगा।

स : और जानवर?

अ : (चीखकर) क्या तुम्हें जानवर दिखलायी नहीं देते?

**चारों एक-दूसरे की तरफ देखते हैं और नये सिरे से कुछ पहचानने की कोशिश करते हैं।**

ब : (उसांस भरकर) कैसा वक़्त आ गया है!

स : उफ़, कितनी गर्मी है!

द : हमें कुछ करना चाहिए।

अ : अपने-अपने औज़ार संभालो।

ब : मैं चमन की तरफ जा रहा हूँ।

स : जाओ, जाओ, यहाँ बदबू मत फैलाओ।

द : उधर डिब्बा रखा है, पानी भरकर ले जाना। दिन-भर हगता है हंगूलाल!

अ : जल्दी करो, अपने-अपने औजार संभालो।

स : औजार कहाँ है?

ब के पेट में मरोड़ उठती है और वह तेजी से डिब्बा लेकर बायीं ओर चला जाता है।

व : हां, कोई बतलाये तो सही कि औजार आखिर है कहां ?
अ : (संकेत कर) औजार वहां हैं।
स : वहां—राख और कचरे में ?
द : वहां औजार किसने छुपाये ?
अ : (घृणा से) तुम्हीं लोगों ने।
स : मुझे तो याद नहीं।
द : मेरे पास तो कभी औजार थे ही नहीं।
अ भूल गये हो। सचमुच तुम भूल गये हो। कल शाम तुमने क्या किया था ?
द : मैंने बेसन की रोटी के साथ आलू का भुर्ता खाया था।
स : मैंने सोने से पहले हेमा मालिनी को याद किया था।
अ : याद करो, अच्छी तरह याद करो।
द : हां, जब मैं बीड़ी पी रहा था तो अचानक धुएं से मेरा दम घुटने लगा। मैंने अपने गले में एक गांठ-सी महसूस की।
अ : बहुत सख्त थी वह गांठ ?
द : काफी सख्त थी। (टेंटुए पर हाथ रखकर) यहीं—बिलकुल यहीं अटक गयी थी। लेकिन मैंने उसे निकाल फेंका, एकदम निकाल फेंका और वहां...।
अ : (कूड़े की तरफ़ इशारा कर) वहां छुपा दिया। उस खज़ाने में।
द : (राहत की सांस लेकर) हां, कूड़ा हमें शरण देता है।
स : हम कीड़े हैं।
द : नरक के कीड़े।
अ : इसमें पछताने या अपने आपको धिक्कारने की कोई बात नहीं। यह जेल है। हम कैदी हैं। इस कटु सत्य को स्वीकारते हुए हमें अपने औजारों की तलाश करनी चाहिए।
द : चलो, उस चिरन्तन कूड़े में अपने औजार ढूंढ़ें।
स : (झिझककर) पहले तुम जाओ।
द : (नाराजगी से) तुम डरते क्यों हो ?
स : मैं बाल-बच्चेदार हूं। कहीं कुछ हो गया तो...?
द : कायर !
अ : (ऊंचे स्वर में) सबसे पहले यह फैसला करना होगा कि हम क्या चाहते है ? कहां जाना चाहते हैं ? दायें या बायें ? रास्ता किस ओर

है ? भविष्य कैसा हो ?

स : तुम्हारी बातें मेरी समझ में नहीं आती ।

द : (अ से) तुम हमें ही क्यों मौत के मुँह में धकेलना चाहते हो ? खुद क्यों नहीं आगे बढते ?

अ : मौत तुम्हारी आँखों में है और जीवन तुम्हारी धमनियों मे ।

ब : बको मत !

स : दूसरो को उपदेश देना आसान है ।

अ : बढ़ो, आगे बढ़ो । लो, मैं आगे बढ़ता हूँ—उस कूड़े की तरफ ।

तीनों खड़े होकर चलने की कोशिश करते हैं । पर चल नहीं पाते, पत्थर की तरह स्थिर हो जाते हैं ।

ब : (जाँघिये का नाड़ा बाँधता हुआ दौड़कर आता है, बदहवास-सा) क्या कर रहे हो तुम लोग ? जल्दी से काम पर लग जाओ । वह आ रहा है । वह सन्तरी । वह टूटी टाँगवाला खच्चर ।

अ, द, स : (सहम कर) खच्चर !

ब : हाँ, आते ही तुम्हारे होश ठिकाने लगा देगा ।

द : तुमने उसे अपनी आँखों से देखा है ?

ब : और नही तो क्या ? तुम्हारी तरह मेरी आँखों में मैल नही भरा पडा है ।

द : मेरी आँखों मे मोतियाबिन्द है ।

अ : मेरे दाँतों मे दर्द होता है ।

स : मुझे ऊँचा सुनायी देता है । जैसे कोई औजार कहे, तो मुझे सुनायी पडता है बाज़ार ।

ब : कोई खिड़की कहे, तो तुम्हें सुनायी देता है लड़की ।

द : कोई छतरी कहे, तो तुम्हें सुनायी देता है जनमपतरी ।

अ : कोई सन्तरी कहे, तो तुम्हें सुनायी पड़ता है परधानमन्तरी ।

स : परधानमन्तरी !

ब : सन्तरी !

बैसाखी की ठकठक सुनायी देती है ।

द : वह आ रहा है ।

ब : हमेशा की तरह ।

स : लँगड़ाता हुआ । बड़बड़ाता हुआ ।

अ : वह दौरे पर है ।

ब : अब हमारी खैर नही ।

स : रघुपति राघव राजाराम ।

आँखें बन्द कर, हाथ जोड़ कर, धरती पर माथा टिकाता

है। गायक-मंडली भी स के साथ गाती है।

ब : जै हनुमान ज्ञान गुण सागर।
जै कपीस तिहुँ लोक उजागर॥
रामदूत अतुलित बल धामा।
अंजनीपुत्र पवनसुत नामा॥

रुक जाता है।

अ : बोलो, आगे बोलो। हनुमान-चालीसा आत्मा को बल प्रदान करता है।

ब : आगे तो—याद नहीं।

बैसाखी की ठक-ठक निकट आ रही है।

अ : (गिड़गिड़ाये स्वर में)
बजरंगबली मेरी नाव चली,
जरा बल्ली क्रिपा की लगाय देना।

ब, स : जरा बल्ली क्रिपा की लगाय देना।

गायक-मंडली स्वरों का निर्वाह करती है।

द : (जो कुछ दूर से सुन्न-सा खड़ा है, एकदम चिल्ला कर) चोप्प! अगर उसने हमें इसी तरह भजन-भाव करते देखा तो बेहद खफ़ा होगा। अच्छा हो, हम काम पर लग जायें।

स : काम पर?

द : उसके आने से पहले ही कुछ कर डालें।

अ : क्या कर डालें?

द : कुछ भी। उसकी खुशी ही हमारी खुशी है।

स : हम तो उसके कौडिया गुलाम हैं।

ब : (उत्साह से) बोल, सियावर रामचन्द्र की...ई...!

अ, द, स : जै!

तीनों एक पंक्ति में खड़े हो जाते हैं।

ब : प्रेड आगे कूँ बढ़ेगा—तेज चल!

तीनों फ़ौजी ढंग से अकड़कर चलते हुए कूड़े के ढेर तक आते हैं। साथ में ब भी।

ब : प्रेड, थम!

तीनों रुक जाते हैं।

ब : बदन में चुस्ती आ गयी न?

द : आ गयी।

ब : देश में सुस्ती आ गयी?

द : सुस्ती नहीं, क्रान्ति...क्रान्ति आ गयी ।

ब : ग़रीबी हट गयी, कुर्सी पट गयी, रात कट गयी ?

अ : कट गयी ।

ब : तो बताओ, अब हम ज़िम्मेदारी संभालें ।

चारों कूड़े के ढेर पर इस तरह टूट पड़ते हैं मानो उसमें से अपने लिए कुछ पाना चाहते हैं ।

अ : जोर तेरा—

तीनों : होइयाऽऽ !

अ : भाई मेरा—

तीनों : होइयाऽऽ !

अ : उड़न कबूतर—

तीनों : होइयाऽऽ !

अ : भूरी बिल्ली—

तीनों : होइयाऽऽ !

अ : पहुंची दिल्ली—

तीनो : होइयाऽऽ !

अ : बन पटरानी—

तीनों : होइयाऽऽ !

अ : बोले बानी—

तीनो : होइयाऽऽ !

अ : (नारी-कंठ बनाकर) तुम...मुझे खून दो, मैं...तुम्हें...दो मुट्ठी...चून दूंगी ।

तीनों : (आलाप लेकर) होइयाऽऽ...होइयाऽऽ...!

अ : (नारी-कंठ में उसी तरह) देश...को...तुम्हारी...जरूरत है, इसलिए...अपनी...जरूरतें...कम...करो ।

तीनों : (आलाप लेते हुए) होइयाऽऽ...होइयाऽऽ...!

नेपथ्य में युद्ध के नगाड़ों की ध्वनि ।

तीनों : (आलाप लेते हुए) डम-डम, ढम-ढम होइयाऽऽ...हुंगम-जंगम होइयाऽऽ...!

नेपथ्य में जैसे युद्ध का कोलाहल तेज़ हो उठता है । सहसा अ, ब, स, द कूड़े में कुछ ढूंढ़ लेते हैं ।

ब : मिल गया, मुझे मेरा हथौड़ा मिल गया । (हथौड़ा कन्धे पर रखकर मंच का चक्कर लगाता है । )

द : यह रहा रन्दा, मेरा रन्दा । मेरी आरी । (रन्दा और आरी संभाले

हुए व के पीछे-पीछे मेंढक की तरह फुदकता है।)

स : कैंची। जानते हो, यह क्या है? कैंची। जुबान से भी तेज़ चलती है।

अ : (उछलकर) इन्द्रपुरी का खेल, असली बंगाल का जादू, कर ले सबके मन को क़ाबू। जै काली कलकत्तेवाली, तेरा वचन न जाय खाली। तो साहेबान, बजाइये, बजाइये एक हाथ की ताली! ऐसा लगे कि ताली की आवाज आसमान से फूटी है। देखिये, देखिये, मेरे हाथ में यह चमत्कारी अँगूठी है, मानो रूप-रस-गन्ध से भरी हुई संजीवनी बूटी है...।

बन्दूक चलने की आवाज़।

द : (फुसफुसा कर) अये जादूगर, जरा पता करो, यह बन्दूक कहाँ पर छूटी है...?

स : किसकी साँस टूटी है...?

व : सत्तावन मरे, पिचानवे घायल हुए। (गाकर) क्या...यह...खबर... झूठी है...?

पृष्ठभूमि में दनादन गोलियाँ चलने लगती हैं। भगदड़ और चीख-पुकार। लाउडस्पीकर पर बार-बार दुहराया जा रहा है:

हथियार डाल दीजिये। छुपाने की कोशिश करना व्यर्थ है। सब जगह सेना तैनात की जा चुकी है। धारा एक सौ चवालीस। धारा एक सौ चवालीस। हथियार डाल दीजिये। हम बागियों से निपटने के लिए कृत-संकल्प है। याद रखिये, बगावत का मतलब है—मौत, खुदकुशी। हथियार डाल दीजिये और हाथ उठा कर चुपचाप खड़े रहिये।

ब, स, द जहाँ खड़े हैं, वहीं हथौड़ा, रन्दा, आरी, कैंची और अँगूठी जमीन पर डाल देते हैं। फिर हाथ ऊपर उठा सिर झुका कर खड़े हो जाते हैं।

अ, व : हम आत्म-समर्पण के लिए तैयार हैं...।

स, द : तैयार है—क्योंकि यह अगले मोर्चे की तैयारी है।

अ, ब : हम जीना चाहते है।

स, द : चाहते है—हम सबके लिए एक बेहतर जिंदगी चाहते हैं।

विराम। रेडियो पर खबरें आ रही हैं:

बगावत को कुचल दिया गया है। पचपन करोड लोग गिरफ्तार किये जा चुके है। उन पर फौजी अदालत मे मुकदमे चलाये जायेंगे। विद्रोह की समाप्ति पर राजा भोज ने जनता के प्रति आभार प्रकट किया है। उन्हें अनेक देशों से शुभकामना-संदेश प्राप्त हो रहे हैं।

दायीं ओर से लेखक का प्रवेश। वह राजकवि की भव्य वेशभूषा में है। मंच के अग्रभाग में गमलों के पास वह एक गुलाबके फूल की ओर एकटक देखता हुआ ठिठक जाता है।

लेखक : सम्पूर्ण राज्य मे वसन्तोत्सव की तैयारियाँ हो रही हैं। चारों ओर कितना उत्साह, कितना आनन्द है ! वन-उपवनो मे नाना प्रकार के पुष्प खिले हैं। शीतल, सुवासित पवन ने स्त्री-पुरुषों को उसी भाँति उन्मत्त बना दिया है, जैसे कामाधिक्य ने तरु-लताओ के सौन्दर्य को। किन्तु प्रकृति की इस मनमोहिनी लीला मे भी मेरा चित्त व्याकुल है, चिन्ता की मन्द-मन्द ज्वाला में झुलस रहा है। दिन में हर क्षण अनिष्ट की आशंकाओं से भरे विचार पीछा करते है और रात्रि में दुःस्वप्न ! **(अ, ब, स, द की ओर देखकर चकित होता है।)** तुम लोग इस तरह निश्चल, नि.शब्द और निर्विकार क्यो खड़े हो ? क्या तुम नही जानते कि राजकवि का हृदय आज कितना अशान्त है ? क्या सोच रहे होंगे राजा भोज ? क्या कल्पना कर रहे होंगे सभासद ? यही न, कि राजकवि की प्रतिभा शून्य के कगार पर पहुँच चुकी है। जब प्रजाजनो को ज्ञात होगा कि मैने वसन्तोत्सव के लिए अपना नया नाटक नही लिखा तो वे कितने क्षुब्ध होंगे ! उनके हर्ष और उल्लास में सहसा विष घुल जायेगा। **(अ, ब, स, द की ओर मुड़कर)** बोलते क्यों नही हो, तुम लोग ? आज मुझे सहानुभूति की जरूरत है। कौन करेगा, मेरे तप्त अन्त.करण पर मेघ-वृष्टि ? क्या कोई नही ? कोई भी नही **(पल-भर रुककर)** तो अन्ततः मुझे राजा भोज का कोपभाजन बनना ही पड़ेगा। जिस राजसभा मे मुझे बार-बार स्वर्णाभूषणों, हीरक-मुक्ताओं और पुष्पमालाओं से सम्मानित किया गया, उसी मे अब घोर अपमान ! नही, नही, ऐसे अपमानित होने से तो मृत्यु श्रेयष्कर है ! मृत्यु ! **(चेहरा बुझ जाता है। एक क्षण बाद अ, ब, स, द, से)** जानते हो, मृत्यु किसे कहते है ? तुम उत्तर क्यों नही देते ? क्या तुम्हे मेरा स्वर सुनायी नही देता ? क्या तुम अन्धे हो, गूँगे हो, बहरे हो ?

अ : **(सपाट स्वर में)** हम बन्दी है।

ब : हम कारागर की कुसुमित वल्लरियों के सिवा अन्य किसी भी दृश्य को देखने में असमर्थ है।

स : हमें दंडनायक की कर्कश, कठोर आज्ञा मात्र सुनायी देती है, राजकवि की कोमल, क्लान्त वाणी नही।

द : अपनी आत्मा के अन्त पुर मे हम न अन्धे हैं, न गूँगे, न बहरे—सिर्फ

नपुंसक हैं।

चारों : (एक साथ) हे राजकवि ! जिस प्रकार कृपण अपनी सम्पत्ति को बार-बार छूकर देखता है, किन्तु उसका उपभोग नहीं कर पाता, उसी प्रकार हम नपुंसक इस सृष्टि रूपी सुन्दरी का उपभोग करने में अक्षम हैं—केवल कहीं-कहीं से स्पर्श कर उसे सहलाते रहते हैं।

**राजकुमारी के रूप में युवती का प्रवेश। वह उतावली-सी कुछ क़दम आगे बढ़ती है।**

युवती : राजकवि, रंगशाला में तुम्हारी प्रतीक्षा की जा रही है।

लेखक : **(चकित)** राजकुमारी, तुम !

युवती : **(आँखें झुकाकर, लाज से)** जिस प्रकार कुमुदिनी चन्द्रमा को, चातक पक्षी बादल को, कोकिल आम्रतरु को और प्रिया अपने प्राणधन को देखने के लिए तरसती है, उसी भाँति समूची रंगशाला तुम्हारे लिए उत्कंठित है, राजकवि !

लेखक : किन्तु, राजकुमारी...?

युवती : नाटक के पूर्वाभ्यास के लिए अभिनेताओं की चंचलता और उत्सुकता दर्शनीय है। महाराजा सहित धारा नगरी के कुछ विशिष्ट जन भी शुभ मुहूर्त पर रंगशाला में उपस्थित हैं।

लेखक : **(चिढ़कर)** विशिष्ट जन ? राजकुमारी, अब मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं रह गयी है कि मैं विशिष्ट जनों का मनोरंजन कर सकूँ। पिछले एक माह के सोच-विचार के बाद मैंने यही तय किया है कि वसन्तोत्सव के लिए नाटक नहीं लिखूँगा।

युवती : **(संदेहपूर्वक)** तो तुमने नाटक नहीं लिखा ?

लेखक : नहीं।

युवती : यह तो बहुत बुरी खबर है, राजकवि !

लेखक : मैं राजकवि का पद त्याग रहा हूँ।

युवती : क्या तुमने निर्णय कर लिया है ?

लेखक : हाँ, यह मेरा दृढ़ निश्चय है। मैं राजसभा से मुक्ति ले लूँगा और जन-साधारण के बीच जाकर रहूँगा।

युवती : तो अब तुम राजकवि नहीं, साधारण कवि बनकर रहना चाहते हो !

लेखक : तुम ठीक कह रही हो। मैं आम आदमी की तरह जीना और आम आदमी के लिए लिखना चाहता हूँ।

युवती : **(व्यंग्य से)** आम आदमी का नाटक ! क्या लिखोगे तुम उसमें ? यही न, कि वह तथाकथित आम आदमी सुबह उठा, चिड़चिड़ाता हुआ। फिर उसने पत्नी से झगड़ा किया, एक बच्चे के धौल जमाया, दूसरे

का कान खींचा, तीसरे को धक्का और बस्ता देकर पाठशाला भेजा। इसके बाद वह बिना पानी के नहाया, बिना कपड़ों के सज कर तैयार हुआ और बिना रज़ामन्दी के रोज़ी-रोटी की तलाश में जुट गया। पहले पैदल-पैदल सड़क पर चला फिर हवा में, फिर आकाश में उड़ कर पाताल में जा गिरा। यही है न तुम्हारे नाटक का कथानक? इसी गँदले जल में डुबो देना चाहते हो तुम अपनी महान प्रतिभा को?

लेखक : राजकुमारी, आम आदमी के प्रति तुम्हारे मन में गहरा द्वेष है, क्योंकि उसकी दुर्बल स्थिति के बावजूद तुम अपने बड़प्पन को स्थायी नहीं बना पा रही हो। तुमने उसके दु:ख-दैन्य का चित्र तो खींचा है, परन्तु एक बड़े संघर्ष से, जिसमे वह सदियों से शामिल है, तुम परिचित नहीं हो। तुम्हें जानना होगा, राजकुमारी, कि आम आदमी के दु:खों का मूल क्या है, वह ऐसी बदतर हालत में क्यों पहुँच गया है? यह भी देखना होगा कि उसकी असामर्थ्य के किस छोर से अग्नि की आकांक्षा उत्पन्न होती है...?

अ : (सहसा तेज स्वर में) लड़ाई शुरू हो चुकी है। गोरा खून, काला खून, पीला खून, नीला खून!

अ, ब, स, द अपने-अपने औज़ार उठा लेते हैं।

युवती : (कुपित) कौन हो तुम लोग? यहाँ राजभवन में आने का साहस तुमने कैसे किया?

अ : यह बन्दीगृह है—

तीनों : हमारी आकांक्षाओं का।

अ : यहाँ कूड़ा फैला है—

तीनों : हमारे सपनों का।

आक्रामक संगीत।

युवती : (घृणा दरशाकर) कितने अभद्र, कितने अशिष्ट हो तुम लोग! राजकवि, इन्हें बतला दो कि मैं धारा नगरी की राजकुमारी हूँ। जिसकी इच्छा मात्र से समुद्र पृथ्वी मे, पृथ्वी समुद्र मे, धूलिकण पर्वत में, पर्वत धूलिकण मे, ज्वाला हिमखंडों मे और हिमखंड ज्वाला में बदल जाता है, उस चक्रवर्ती राजा भोज की एक मात्र पुत्री। इनसे कह दो कि पहले झुककर मेरे प्रति पूर्ण सम्मान प्रदर्शित करें, फिर अशिष्टता के प्रायश्चित के लिए प्रस्तुत हों।

अ : राजकुमारी!

ब : राजसत्ता!

स : हाथ में क्या है—

द : चिड़ी का पत्ता।

अ : राजा की लडकी—

ब : देखके भडकी।

स : गुर्रायी गुर्र-गुर्र—

द : चिड़िया उड गयी फुर्र।

लेखक ठहाका लगाकर हँस पड़ता है। युवती क्रोध से तमतमा उठती है। अ, ब, स, द पुनः भावहीन-से खड़े हो जाते हैं।

लेखक : वाह, भई, वाह! लगता है, जनकवि बनने से पहले मुझे तुम लोगो के पास बैठकर बहुत-कुछ सीखना होगा।

युवती : (ताली बजाकर) कोई है! कोई है! मैं अभी इन्हें देश-निर्वासन का दंड दिलवाऊँगी। प्रहरी!

अ, ब, स, द ताली बजाते हुए गाते हैं :

अ,ब,स,द : देश-निकाला
आला-झाला
एक थी ज़िद्दी, सुन्दर बाला।
सबका चित्त
चचल कर डाला
गयी ढूंढने मोती-माला
किन्तु मिला लोहे का भाला।
आला-झाला
देश-निकाला।
नदी बड़ी
छोटा परनाला।
परनाले मे फँस गया पाँव
कौवा बोला कॉव-कॉव!

पृष्ठभूमि में कौओं की कांव-कांव और तीखा संगीत।

युवती : (चिल्ला कर) कोई है? प्रहरी!

अ,ब,स,द : (गाते हुए)
कोई नही है आगे-पीछे
बर्र दब गयी सिल के नीचे।
तडप-तड़प कर
डंक लगाये
जहर बहुत—

पर काम न आये
आखिर पस्त हुई बेचारी।
बरं कहो—
या राजकुमारी।
भूल गयी सब सिट्टी-पिट्टी
खाने लगी गली की मिट्टी।
खूब चला मिट्टी का दाँव
कौआ बोला काँव-काँव !

इस बार कौओं की काँव-काँव के साथ अन्य पक्षियों के भी क्रूर स्वर।

युवती : (आतंकित) सारे प्रहरी कहाँ चले गये ? राजभवन इतना सूना-सूना क्यों है ?

लेखक : हो सकता है, सब रंगशाला मे चले गये हों।

अ : या धर्मशाला में।

ब : या गौशाला में।

स : जिसको जहाँ जाना है, वहीं जायेगा।

द : जिसको जो पाना है, वही पायेगा।

युवती की ओर आँख मारता है।

लेखक : सुनो, राजकुमारी !

अ : राजसत्ता !

युवती : मैं कुछ भी नही सुनना चाहती।

लेखक : कानों पर हाथ रखने से आवाजें बंद नही हो जायेंगी।

ब : आँखें मूंद लेने से दृश्य अदृश्य नही हो जायेंगे।

स : तुम चुप रहोगी तो भी भाषा अपना काम करेगी।

द : और हम अपना काम करेंगे।

लेखक : सुनो, राजकुमारी !

युवती जड़वत् खड़ी है।

अ : बोलते जाओ, नाटककार, राजकुमारी सुन रही है।

लेखक : (युवती से) तुम चाहो, तो यहाँ भी एक नाटक खेला जा सकता है।

युवती : (अस्तव्यस्त) यह सब कैसे हो गया ? राजभवन मे मौत का-सा सन्नाटा छाया हुआ है। (संभलकर) मुझे तुरन्त कुछ करना चाहिए। सम्भव है, राज्य पर कोई विपत्ति आ पड़ी हो, महाराजा संकट मे हों, मुझे चलकर देखना चाहिए।

अ : दरवाज़े बन्द हैं—

ब : रास्ते वीरान।

स : नगर मे गूंज रहा है—

द : गंगू तेली का फरमान।

फ़रमान की गूंज सुनायी देती है।

लेखक : घबराओ मत, राजकुमारी! आओ, मेरे साथ आओ। यहाँ बैठो। मैं तुम्हें अपने नये नाटक की कहानी सुनाता हूँ शायद तुम्हें उसमे कोई विकल्प मिल जाये।

युवती लेखक से सट कर बैठ जाती है। अ, ब, स, द भी कुछ परे हट कर बैठ जाते हैं और अपने-अपने औज़ारों को झाड़-पोंछ कर चमकाने लगते हैं।

युवती : कहानी? क्या यह कोई प्रेम-कहानी है?

अ : (जादू की अंगूठी को ग़ौर से देखते हुए) राजा की होगी या रानी की?

स : मूढ! नाना की या बूढ़ी नानी की?

लेखक : नही, यह सिर्फ एक पुतली की कथा है।

द : मैंने बहुत दिनों से कठपुतली का खेल नहीं देखा।

ब : सुनाओ, भई, पुतली की कहानी सुनाओ। बचपन में माँ मुझे कहानियाँ सुनाते-सुनाते रोने लगती थी और मैं बेबात हँसने लगता था।

स : फिर वह किसी बात पर हंसने लगती थी और तुम रोने लगते थे।

ब : तुम्हें यह सब कैसे मालूम?

स : स्साला, ढब्बूजी कही का!

ब : (गुस्सा होकर) कौन है ढब्बूजी?

स : तुम्हारा बाप!

ब : मेरे बाप का नाम बदलने का तुम्हे हक नही।

स : चुप, बे!

ब : (रुआंसा होकर) मेरे बाप का नाम ढब्बूजी नही था, बताये देता हूँ।

द : तो लब्बूजी होगा।

ब : अँहँ, गलत।

अ : तो झब्बूजी होगा।

ब : नहीं।

द : तो ज़रूर दब्बूजी होगा।

ब : (हँस कर) शाबाश, मेरे बाप का नाम दब्बूजी था।

युवती : (घृणा से) तुम इन्ही लोगो पर नाटक लिखना चाहते हो?

लेखक : हाँ, मेरे नाटक मे ये चार जने हैं। लो, कहानी सुनो।

स : सुनाओ, यार, कहानी सुनाओ।
अ : अब कोई बीच में बोला तो वो भडवा मेरे बाप का देवर।
द : धत् तेरे की ! अबे धिमडी की संतान, देवर बाप का होता है या माँ का।
अ : किसी का भी होता हो, क्या फर्क पडता है ? देवर, देवर है।
द : जैसे बर्फी बर्फी है, घेवर घेवर है।
युवती : (लेखक से) जब तक तुम कहानी सुनाना शुरू नही करोगे, यह चांडाल-चौकड़ी इसी तरह ऊलजलूल बकती रहेगी।
लेखक : तो ऽऽ मैं जो कहानी तुम्हें सुना रहा हूँ, वह कोई सचेतन, अचेतन या विरेचन कहानी नही—नाटक की कथावस्तु है। जहाँ-जहाँ कथा की धारा बहेगी, वहाँ-वहाँ अभिनय के जलवृत्त बनेंगे। हाँ, तो सबसे पहले मंगलाचरण...।
अ,ब,स,द : मंगलाचरण !

अ कचरे के ढेर में से ढोलक ढूंढ़ लाता है।

लेखक : (गायकमंडली के साथ)
सबसे पहले सवाल उठा—
कि कौन करे मंगलाचरण ?
कौन पहनाये शब्द—नटी को
छन्दों के आभरण ?
कहने लगा सूत्रधार—
मंगलाचरण करे वह
जिसे मिल चुका हो
मंगलाप्रसाद पुरस्कार
या अकादेमी का मंगल-कलश—
मगलम् भगवान विष्णु
मंगलम् गरुड़ध्वजः
अ,ब,स,द : मुगलम् भगवौन विश्नुं मुगल्लम् गुरडधुजा।
स : मल्लम् मुगुरड़धुजा...गुरड़धुजा...गुरड़धुजा...गुरडधुजा...गुरड़-धुजा।
लेखक : (स से) यह क्या कर रहे हो ? मंगल मे अमंगल !

स उसी तरह आँखें बन्द किये 'गुरड़धुजा-गुरड़धुजा' दुहराता रहता है।

ब : बुरा मत मानो, भाई, इस पर कभी-कभी प्रेत की छाया आती है।
लेखक : प्रेत की छाया ?

ब : हाँ, राजा का प्रेत।
लेखक : लेकिन राजा तो जिन्दा है।
अ : (ढोलक पर थाप देकर) राजा कब मरता है, कब जिंदा हो जाता है, कोई नहीं जानता। अच्छा, तुम वो मुगल्लम-बुंगल्लम शुरू करो।
लेखक : तो सबसे पहले सवाल उठा कि कौन करे—
मंगलाचरण ?
कौन सुनायें वीणा-वादिनी का मुद्रा-पत्र ?
कौन करे राजसभा में
अपनी याचना—
राज-पादुका का वरण ?
युवती : (नाचती हुई) सावधान...सावधान...सावधान !
खींचो चोटी।
पकड़ो कान।
आया-आया धम-धम करता
ज्ञानपीठ का लखटकिया आगे।
सारे भूत-प्रेत जागे।
अ,ब,स,द : सारे भूत-प्रेत जागे।
युवती : भूतों ने भूतों को पहनाये पुष्पहार—
लेखक : जय पुरस्कार, जय पुष्पहार !
युवती : जय तिरस्कार, जय पुरस्कार !
अ,ब,स,द : जय तिरस्कार, जय पुरस्कार !
यह कीर्तन कुछ क्षण चलता है।
लेखक : *शान्त, सज्जनो, शान्त !*
सब शान्त हो जाते हैं।
लेखक : मैंने कहा, सज्जनो—और सज्जन कूच कर गये संसार से।
युवती : मैंने कहा, देवियो—और देवियाँ निकल गयीं सभागार से।
अ : तो दर्शक कहाँ हैं ?
ब : (गाकर) दर्शक गये फिल्लम देखने, नाटक कैसे हो ?
द : हाँ, भई, दर्शक गये इल्लम खोजने, नाटक कैसे हो ?
स : दर्शक गये चिल्लम फूँकने, नाटक कैसे हो ?
अ : टिकट रह गये यहीं हाथ में, नाटक कैसे हो ?
युवती : (गिनकर) पाँच छोकरे एक छोकरी, नाटक कैसे हो ?
लेखक : भरत मुनि कह गये भाँड से, नाटक कैसे हो ?
अ : तुलसीदास भजो भगवाना, नाटक कैसे हो ?

ब : सूरदास मोहे आज उबारो, नाटक कैसे हो ?
स : कहत कबीर सुनो भाई साधो. नाटक कैसे हो ?
द : रहिमन मन की मन मे राखो, नाटक कैसे हो ?
युवती : मीरा के प्रभु गिरिधर नागर, नाटक कैसे हो ?
लेखक : नाटक लोकसभा में, नाटक शोकसभा में—
युवती : नाटक ब्रह्मपुरी मे, नाटक इन्द्रपुरी में—
अ : नाटक नदी-नाव में, नाटक गाँव-गाँव में—
ब : नाटक अखबारों में, नाटक दरबारो में —
स : नाटक हरियाणा में, नाटक महाराणा में—
द : नाटक चूल्हे-चौके मे, नाटक धोखे में—
लेखक : नाटक दफ्तर मे और नाटक चिड़ियाघर में—
सब : पर, नाटक नही थिएटर मे, तो नाटक कैसे हो ?

**भजन शैली में बोले गये ये संवाद एक झटके के साथ खत्म हो जाते हैं।**

लेखक : तो कुल चार पात्र थे।
अ : (गिनती करते हुए) एक, दो, तीन, चार।
लेखक : एक बढ़ई, दूसरा दर्जी, तीसरा राजगीर, चौथा जादूगर।
अ,ब,स,द : (खुश होकर) यानी हम चारों जने।

**अपने-अपने औजारों को चूमने लगते हैं।**

लेखक : चार पात्र, लेकिन पात्री एक भी नही।
अ : (युवती की ओर देख कर) एक भी नही ?
ब : एक तो होनी ही चाहिए, आखिर चार जने हैं।
स : एक तो होगी ही, वरना काम कैसे चलेगा ?
द : मुझे तो अकेले ही चाहिए।
युवती : (थोड़ा घूँघट निकालकर शरमाते हुए) मुझ से मसखरी करते हो, तुम्हारे माँ-भैन नही है क्या, जी ?
ब : माँ-भैन तो हैं, जी, पर हम एक बीवी चाहते हैं।
स : हट्ट, गबद्दू, इस जमाने में बीवी चाहता है। प्रेमिका बोल, प्रेमिका।
युवती : लेकिन मैं तो प्रेम करना जानती ही नही।
द : कोई हर्ज नही, मेरे पास सचित्र कोकशास्त्र है।
युवती : मैंने तो पाकशास्त्र में डिग्री ली है।
द : तो तुम हलवा पकाना, मैं तुम से रसोईघर में ही प्रेम करता रहूँगा।
युवती : शरम नही आयेगी ?
द : आयेगी तो सही, पर क्या किया जाये ! पाकशास्त्र के माध्यम से

कामसूत्र की नयी व्याख्या करनी ही पड़ेगी।

अ,ब,स : फिर हमारा क्या होगा ? हम कहाँ जायेंगे ?

द : तुम सब जाना बूचड़खाने में।

युवती : क्यों जी, द्रौपदी के भी तो पाँच पति थे ?

अ : सुनो, हम एक घर में रहेंगे।

ब : और बँटवारा कर लेंगे।

स : (द से) तुम इससे रसोईघर में प्रेम करना, मैं स्नानघर में कर लूँगा।

अ : मैं बैडरूम में।

ब : मैं तो गैलरी में चलते-चलते ही वो-वो सब कर लूँगा।

अ,ब,स : (द से) बोलो, मंजूर है न ?

युवती : इनसे क्या पूछते हो जी, मुझसे पूछो।

द : चोप्प ! तुमसे क्या पूछना है ? तुम्हारे पास जब आयेंगे तब पूछ लेंगे। (तीनों से) मंजूर है भाई, मंजूर है।

**युवती नाराज होकर नृत्य-गति से चलती हुई दूर जा खड़ी होती है।**

अ : गयी ?

ब : कहाँ गयी ?

स : वो—वहाँ। (**युवती की ओर संकेत करता है।**)

द : हाथ से निकल गयी।

अ : औरत जात का कोई भरोसा नहीं।

लेखक : सुनो, सुनो भई, पहले कहानी सुनो। चार पात्र थे और पात्री एक भी नहीं।

द : एक था बढ़ई।

स : दूसरा दर्जी।

ब : तीसरा राजगीर।

अ : और चौथा जादूगर।

युवती : (**कोने से घोषणा करती हुई**) देश-विदेश के राजपुत्रों को सूचित किया जाता है कि मैं धारानगरी के यशस्वी राजा भोज की सुयोग्य कन्या आज स्वयंवर के लिए प्रस्तुत हूँ। जो पराक्रमी पुरुष सात समुन्दर पार से खाद्य-सामग्री अर्थात गेहूँ, चीन से च्यवनप्राश, पाकिस्तान से फूट के बीज, तमिलनाडु से राष्ट्रभाषा की बानगी, तेलंगाना से तिलचट्टों का मर्तबान और राजस्थान से मुख्यमंत्री की नींद चुराकर ला सकेगा, मैं उसी को वरमाला पहनाऊँगी। आगामी कई-कई शताब्दियों तक वही मेरे सौन्दर्य-पान का अधिकारी होगा।

द : चुड़ैल !

स : राजकन्या से तुम और क्या उम्मीद करते हो ?

ब : अच्छा हुआ, पिंड छूटा।

अ . राजकुमारी की बगल में लेटने का अर्थ है राजसत्ता की बगल में लेटना।

लेखक : तो समस्या यह थी कि चार पात्र और पात्री एक भी नहीं।

द : धत्, तुम आगे भी कुछ कहोगे या यही बड़बड़ाते रहोगे ?

लेखक : हाँ, तो चार पात्रों के बीच एक भी पात्री नहीं।

स : सुन लिया बे घोंचू, सब सुन लिया। अब कहाँ से लायें पात्री ?

लेखक : तो मुद्दा यह था कि कहाँ से लायें पात्री। क्या उपाय किया जाये कि पात्री के अभाव की पूर्ति हो ? आखिर...।

ब : क्या हुआ आखिर ? बताओ न।

लेखक : आखिर बढई ने एक तरीका ढूँढ़ निकाला।

द : (गर्व से) बढई ने ?

लेखक : हाँ, वह वन में गया।

स : (कुढ़ कर) वह वन में गया। उसे शेर खा गया। किस्सा खतम।

लेखक : वन से बढ़ई एक पेड़ काटकर लाया।

ब : पेड पर चील के अंडे थे। अंडे फूट गये। चील ने मारी चोंच। बढई की दोनों आँखें फूट गयी।

लेखक : बढ़ई ने पेड़ की डालियों को छाँटकर अलग किया। छाल उतारी, तने को तराशा और आकृति गढने लगा। धीरे-धीरे एक पुतली बन गयी। सुन्दर, सुडौल हाथ-पाँव, गदराया हुआ वक्षस्थल, मुख पर अद्भुत कान्ति, नितम्बों मे कामदेव का वास।

अ : हिश्श ! मुझे पहले ही मालूम था, यह किसी पुतली का तमाशा रचेगा और फिर लार पकायेगा।

स : बे नाटककार की खोपड़ी ! पुतली से पात्री का क्या सम्बन्ध ? तुम्हारे भेजे में चौमू का चीटा तो नहीं घुस गया ?

द : सुनने दे। ज्यादा चबर-चबर मत कर।

लेखक : बढ़ई अपनी बनायी हुई पुतली पर मुग्ध हो गया।

**द एकटक युवती की ओर देख रहा है।**

अ : देखो, ससुरे की अक्ल ! पड गये न पत्थर।

लेखक : बढ़ई उस पुतली को दर्जी के पास ले गया।

स : दर्जी के पास ? [प्रसन्नता व्यक्त करता है।]

**युवती पुतली की भाँति खड़ी है। पहले द उसके निकट जाता है, फिर स।**

लेखक : बढ़ई ने दर्जी से कहा, तुम जो चाहो, मुझसे ले लो, पर इस पुतली को सजा दो। दर्जी भी पुतली पर मोहित हो गया। उसने कुछ नहीं लिया और पुतली को नये परिधान में सजाने लगा।

ब : रसाला, कैंची-मास्टर कहीं का !

लेखक : दर्जी ने पुतली को जोधपुरी लहँगा, जयपुरी बन्धेज की चुनड़ी, बीकानेरी अँगिया और खास जालोरी बूटेदार जूतियाँ पहनाकर अप्सरा की भाँति सजा दिया। फिर उसने पुतली के बाल सँवारे, माथे पर तिलक लगाया और आँखों मे काजल। कानों मे कुंडल, गले मे हार, हाथों में चूड़ियाँ पहनाकर उसने भरी-भरी नजर से पुतली को देखा और सुध-बुध खो बैठा।

*संवाद के अनुरूप स भाव-भंगिमाएँ प्रदर्शित करता है।*
*युवती अविचल खड़ी रहती है।*

अ : दर्जी रे दर्जी,
लुगाई तेरी फ़र्जी।
यारों से आँख लड़ाये
तुझको एड़ी दिखलाये।
नैना मटकाती जाये
उसकी ऐसी ही मर्जी।
ओ दर्जी रे दर्जी !

**गायक-मंडली भी इस संवाद को सुर देती है।**

लेखक . अब बढ़ई और दर्जी ने सोचा कि पुतली का रूप देखकर तो इन्द्र का भी मन डाँवाडोल हो सकता है। यदि उसे किसी सतखंडे महल मे रख दिया जाये तो सचमुच अप्सरा से भी बढ़कर सुन्दर लगेगी। यह विचार आते ही दोनो उस पुतली को लेकर राजगीर के पास गये।

ब : राजगीर के पास ? मजा आ गया। अब देखो, मैं रातो-रात सतखंडा महल बनाता हूँ और उस अप्सरा जैसी पुतली को उसमें छुपाकर रख लेता हूँ।

अ : भाग बे, चूने के चीचड़े ! मुँह पर गारा पोत ले। ईंटों से अपना माथा फोड़, पत्थरो से कमर तोड। तेरे करम में यही लिखा है।

*ब युवती के पास जाकर हथौड़े से पत्थर तोड़ने, दीवारें खड़ी करने और खिड़कियाँ लगाने का अभिनय करता है। फिर पार्श्व से सामान ला-लाकर महल बनाने लगता है।*

लेखक · जिस दिन महल बनकर तैयार हुआ, राजगीर की खुशी का कोई और-

छोर नहीं था। वह सामने खड़ा होकर उस महल को सन्तोष की निगाह से देखने लगा।

अ : तभी एक छज्जा टूटकर गिर पड़ा और राजगीर उनके नीचे दबकर टें बोल गया। पी० डब्लू० डी० के ठेकेदारों से मकान बनवाओ, तो यही हाल होता है।

लेखक : महल के एक सुसज्जित कक्ष में पुतली को प्रतिष्ठित कर दिया गया। किन्तु इतनी सुन्दर पुतली को निष्प्राण देखकर बढ़ई, दर्जी और राजगीर आत्म-यंत्रणा में घुलने लगे। सौन्दर्य को देखते रहने और न पाने की पीड़ा बड़ी भयंकर होती है। तीनों विरह की वेदना भोग रहे थे।

अ : तीन तिलंगे,
लगे नहाने—
हर-हर गंगे!
उड़ गयी धोती
रह गये नंगे।
हर-हर गंगे!

लेखक : एक रोज बढ़ई को खयाल आया कि अगर कोई सच्चा जादूगर कहीं मिल जाय तो वह पुतली में प्राण भर सकता है। उसने दर्जी और राजगीर से बात की। उन्हें भी यह उपाय पसन्द आया। तीनों जादूगर को ढूंढने निकल पड़े।

अ : अब आयेंगे मेरे पास झक मारकर।

लेखक : उन्होंने हिमालय की कन्दराओं में ढूंढा, ध्वजपताकाओं में ढूंढा, तब कहीं जाकर वह सिद्ध जादूगर मिला। वे डरते-डरते उसके सामने पहुँचे।

ब, स, द : (सहमे-सहमे से अ के पास आते हैं।)

अ : डरते है। ललुए कहीं के!

ब, स, द : हे जादूगर, जालसाज!

अकड़कर खड़ा हो जाता है।

ब, स, द : हम तुम्हारी शरण में आये है।

अ : आच्छ्या।

ब, स, द : तुम मायावी हो। जीव, जगत और माया का मर्म जानते हो।

अ : आच्छ्या।

ब, स, द : तुम ईश्वर के अनुचर हो, चराचर में व्याप्त हो।

अ : आच्छ्या।

ब, स, द : तुम बिन्दु को सिन्धु बना सकते हो। सिन्धु को पल में सुखा सकते हो। वायु को बाँध सकते हो। अग्नि को मुट्ठी में बन्द कर सकते हो।

अ : आच्छ्या।

ब : हे नाथ, हम अनाथों पर कृपा करो।

स : पुतली मे प्राण भरो।

द : दया करो, दया करो।

अ : हमने तुम्हारी प्रार्थना सुनी।

ब, स, द : सुनी।

अ : हमने माया को वश मे किया।

ब, स, द : किया।

अ : हम पुतली पर कृपालु हुए।

ब, स, द : हुए।

अ : और हमने जादू की अँगूठी पहनाकर उसमे प्राण भरे।

ब, स, द : भरे।

अ युवती की अँगुली में अँगूठी पहनाता है और पीछे जाकर गर्व से चहलक़दमी करने लगता है।

युवती : (पलकें झपकाकर) मैं कौन हूँ ?

ब : वह तो सचमुच जीवित हो उठी !

स : बिलकुल घरेलू औरत की तरह नकिया कर बोल रही है।

द : (युवती से) तुम पुतली हो, सुन्दर पुतली।

युवती : मैं पुतली हूँ ?

ब : नहीं, तुम अब पुतली नहीं हो, अनंगममंजरी हो।

स : तुम मदनिका हो।

युवती : मैं कहाँ हूँ ?

द : तुम यहाँ हो, मेरे हृदय के केलि-कुंज में।

ब : मेरे प्रणय के प्रांगण में।

स : (बाँहें फैलाकर) तुम मेरे बाहुपाश में हो।

द : जा, बे, बाहुपाश के बच्चे, पता भी है, बाहुपाश का मतलब क्या होता है ?

ब : पहले शब्दकोश कंठस्थ करो।

द : फिर लघुसिद्धान्तकौमुदी।

ब : फिर कालिदास-रचित कुमारसंभव।

द : तब जाकर पता चलेगा कि बाहुपाश और महानाश में क्या फ़र्क होता है।

स : क़तई फ़र्क नहीं होता।
ब : जान गये ?
द : पुराना खिलाड़ी है।
युवती : तुम लोग किस भाषा में बात कर रहे हो ?
स : प्रेम की भाषा में।
युवती : यह प्रान्तीय भाषा है या राष्ट्रीय ?
स : स्थानीय। कभी-कभी यह गोपनीय भी होती है।
ब : क्या होती है ?
स : (खीभकर) कद्दू की चटनी।
द : चूं-चूं का मुरब्बा।
ब : बारह अदद लाड्लों से भरा हुआ डब्बा।
युवती : नहीं, मुझे ऐसा प्रेम नहीं चाहिए।
स : तुम मेरे साथ चलना पसन्द करोगी ?
युवती : मैं पहले परिवार-नियोजन-केन्द्र जाना पसन्द करूँगी।
ब : मैं तुम्हे पालकी मे बिठाकर अपने घर ले जाऊँगा।
युवती : मुझे लोकसभा में महिलाओं के लिए सुरक्षित सीट पर बैठना अच्छा लगता है।
द : मैं अब और इन्तजार नहीं कर सकता। आओ, मेरे करीब आओ, ताकि मैं तुम्हे गले लगा सकूं।
युवती : वसुधैव कुटुम्बकम्। मुझे समस्त विश्व को गले लगाना है।
स : तुम्हारा और मेरा साथ अमर रहेगा।
युवती : मैं सिंहासन पर अमर होना चाहती हूँ।
द : यह न भूलो कि मैंने तुम्हारा निर्माण किया है।
स : मैंने तुम्हारे रूप को सजाया है, सँवारा है।
ब : और मैंने दिन-रात एक कर तुम्हारे लिए सतखंडा महल बनाया है।
युवती : तुम लोगों ने मुझे अपना-अपना मत प्रदान कर विजयी बनाया, इसके लिए मैं तुम्हारी बहुत-बहुत आभारी हूँ। जनता की शक्ति ही मेरी शक्ति है।
द : यह प्रलाप बन्द करो और सीधी-सादी स्त्री की तरह मेरे साथ गँठ-बन्धन में बँध जाओ।
स : गटर में गया गँठबन्धन। इस पर सबसे ज्यादा मेरा हक़ है।
ब : हक़-बक का मुगालता छोड़ो। स्त्री जिस घर में रहती है उसी की सम्पत्ति कहलाती है। यह मनुस्मृति मे कहा गया है।
द : मनुस्मृति क्या, तुम किस्सा तोता-मैना का भी हवाला दो तो कोई

फ़ायदा नही।

ब : यह मेरा बनाया हुआ महल है और... (युवती का हाथ पकड़कर) यह मेरी सम्पत्ति।

युवती : मुझे दंगों से नफरत है। आपस में झगड़ने से देश की ताकत कम होती है।

ब, स, द : चिन्ता मत करो। हम ताकतवर हैं और तुमसे शादी करना चाहते हैं। तुम्हारा फ़ैसला सबको मान्य होगा।

अ : खामोश!

ब : क्या है?

स : बीच मे टाँग मत अड़ा।

द : टाँग तोड़ दी जायेगी।

अ : इस चारुचन्द्रिका पर मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है।

ब, स, द : तुम्हारा?

अ : क्या तुम्हें याद नही कि मैंने ही इसमें प्राण भरे थे?

युवती : सीमा पर तैनात सैनिकों से मुझे यही कहना है कि जहाँ राष्ट्र के सम्मान का प्रश्न हो, प्राणो का कोई मूल्य नही।

अ : पहले यह पुतली थी, निर्जीव पुतली। मैंने इसे जीवन दिया, ज्ञान दिया, वैचारिक क्षमता दी।

युवती : विचारों की स्वतंत्रता का दुरुपयोग नही होना चाहिए।

ब, स, द : यदि हम इसे आकार, सौन्दर्य और साधन नही देते, तो तुम्हारा जादू व्यर्थ साबित होता।

अ : न्याय का पक्ष यही है कि इसका विवाह मुझसे हो।

ब : तुम न्याय की दुहाई देने वाले होते कौन हो?

स : बन्दर को मिल गयी हल्दी की गाँठ और पंसारी बन बैठा!

द : बेहतर यही होगा कि हम अपने-अपने दावे त्याग दें और सारी स्थिति पर विचार कहने के लिए एक समिति का गठन करें।

युवती : मैं न्यायिक जाँच-पड़ताल मे विश्वास रखती हूँ।

ब : आज कोई निष्पक्ष नही है।

स : इंसाफ खत्म हो चुका है।

द : सब जगह समाजवाद है।

युवती : समाजवादी शक्तियों को एक होना है।

ब : यही तो रोना है।

स : क्यों न हम राष्ट्रसघ मे जायें और महासचिव से फैसला देने का आग्रह करें।

मध्य प्रदेश कला परिषद, भोपाल की 'रसगन्धर्व' की प्रस्तुति में

राजकवि द्वारा मंगलाचरण

गुलाब के फूल की साक्षी में शपथ-ग्रहण समारोह

गन्धर्व-लीला और समूह गान
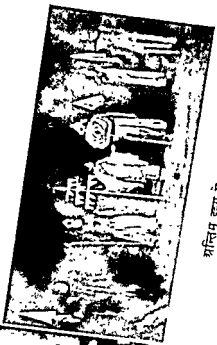
अन्तिम दृश्य में ध्वजारोहण

अ : राष्ट्रसंघ में जब तक फैसला होगा, तब तक यह रूप-शिखा कुम्हला चुकी होगी। इसके दाँत तरबूज के बीजों की तरह निकलकर गिर चुके होंगे। गालों में बन चुके होंगे खाई-खंदक और कमर कमान की तरह टेढ़ी हो चुकी होगी। (पोपले मुँह से) क्या उस वक़्त भी तुम लोग इससे विवाह करना चाहोगे ?

ब, स, द : नहीं।

अ : राष्ट्रसंघ की तो यही दशा है।

ब : मसल मशहूर है, जवानी चार घड़ी की। लेकिन राष्ट्रसंघ में तो चार नहीं, चौबीस नहीं, चालीस बरस में भी फैसला हो जाये तो ग़नीमत है।

स : और इतने सालों बाद भी फैसला होगा यह कि हम पूर्व-स्थिति स्वीकार करते हैं।

ब : जो जहाँ है वहीं रहेगा।

स : अन्यथा राष्ट्रसंघ नहीं रहेगा।

पृष्ठभूमि में धमाका। शोर।

द : (भयभीत) यह आवाज़ ?

स : बम गिरा है।

ब : गोली चली है।

अ : नहीं, कोई कुएँ में कूदा है।

द : लेकिन क्यों ?

स : बीवी से लड़कर।

ब : महँगाई में झड़कर। जैसे सूखा पत्ता झड़ जाता है।

द : आत्महत्या ?

अ : नहीं, पुनर्जन्म का प्रयत्न। इधर मरे, उधर पैदा हो गये।

द : किधर ?

अ : (दर्शकों की ओर इशारा करते हुए) उधर।

स : चौरासी लाख योनियाँ होती है।

ब : जन्म-मरण का क्रम चलता रहता है।

फिर धमाका। तीव्र कोलाहल।

द : फिर वैसा ही शोर।

स : यह कुछ भिन्न किस्म का है।

ब : शायद पुल टूट गया हो।

अ : नदी मे बस डूब गयी हो।

स : लगता है, रेलगाड़ी उलट गयी है।

द : या कुर्सी।

ब : मंत्रिमंडल का पतन।

अ : हो सकता है, हवाई जहाज का पतन हुआ हो।

ब : एक ही बात है।

द : हवाई जहाज मे भी मंत्री बैठे होंगे।

अ : आम आदमी भी हो सकता है।

ब : आम आदमी ! हवाई जहाज मे ?

स : पिछली बार जब हवाई जहाज गिरा था तो एक पत्रकार ने लिखा था—आम आदमी के लिए अब हवाई जहाज मे बैठना खतरे से खाली नही रह गया है।

ब : पत्रकार के लिए आम आदमी वही होता है, जो प्रेस-कान्फ्रेन्स में थूक उछाले।

द . टोपी के नीचे गजा हो।

अ : पर हाथ मे हरदम कंघा हो।

स · गंजा कंघे का क्या करेगा ?

अ : खल्वाट पर खूबसूरत पेंटिंग बनायेगा।

ब : वो कहावत है न, नंगी क्या तो धोयेगी और क्या निचोड़ेगी।

अ : नंगी दुर्भाग्य को धोयेगी, नारों को निचोड़ेगी।

चारों मिलकर यह कथन दोहराते हैं।

युवती : तो मेरा क्या होगा ?

ब : अत्यन्त खेद का विषय है कि हम अब तक यही तय नही कर पाये कि इसका क्या होगा। इस अप्सरा का ?

स : इसे किसी अफसर के पास ले चलो।

द : अप्सरा के विवाद मे अफसर का फ़ैसला, ईश्वर का फ़ैसला।

अ, ब, स · मंजूर

द : तो चलो।

अ, ब, स . चलो, चलो।

चारों गाते हैं :

एक कदम आगे
पाँच कदम पीछे, चलो, चलो, चलो !
एक क़दम ऊपर
सात कदम नीचे, चलो, चलो, चलो !

लेखक इस बीच कचरे की तरफ जा कर अफसर का बाना धारण कर चुका है। कूड़े में से कनटोप, सिगार

और डेढ़ हाथ की क़लम खोज लाया है। यह हवा में आदेश लिख रहा है।

ब : यही है वो।

स : अफ़सर ?

अ : कनखजूरा।

अफ़सर टेलीफ़ोन कर रहा है।

द : यह हवा में बातें करता है।

ब : हवा में आदेश लिखता है।

अ : इसीलिए इसकी हवा कभी निकलती नही।

स : निकल जाती है।

अ : कब ?

स : जब गुब्बारे मे छेद हो जाता है।

द : इसके रोम-रोम में छेद है।

ब : यह छेदों के बल पर ही जिन्दा है।

अ : जब पुराने छेद बन्द हो जाते हैं, तो यह नये छेद खोज लेता है।

ब : इसी को कहते हैं—छिद्रान्वेषण।

द : (पास जाकर) हे छेदीलाल !

अफसर : क्या है ?

स : हमारे भाग्य का निर्णय आपके कर-कमलो में है।

अफसर : हो चुका।

द : क्या हो चुका ?

अफसर : भाग्य-निर्णय।

अ : बिना सुनवाई के ही ?

अफसर : हाँ। वेतन में बढोत्तरी नही होगी। अधिक भत्ता नही मिलेगा। रिक्त स्थान नही भरे जायेंगे। पदोन्नति नही होगी।

ब : हम राज्य-कर्मचारी नही है।

अफसर : तो यहाँ क्यो आये हो ?

स : आपकी शक्ल देखने के लिए।

द : आपका हुलिया पढने के लिए।

अफसर : पढाई-बढ़ाई यहाँ नही होगी। स्कूल में जाओ। कॉलेज में जाओ। पिंजरापोल मे जाओ।

अ : छेदीलाल !

अफ़सर : कहो।

अ : हम मैरिज-ऐक्ट के तहत आपकी राय जानना चाहते है।

अफ़सर : वकीलों के पास जाओ।

व : सरकारी हस्तक्षप के कारण वकील अदालतों का बहिष्कार कर चुके हैं।

अफसर : मुझे फ़ुरसत नहीं। मुझे फ़ुरसत नही। मुझे फुर्रसत नहीं। (खड़ा हो जाता है।) मुझे ज़रूरी काम निपटाने है।

स : निपट चुके।

अफ़सर : मुझे दौरे पर जाना है। बायाँ पाँव रूस मे, दायाँ अमेरिका मे। धड़ हिन्दुस्तान में, सिर...।

द : कब्रिस्तान मे।

अ : कमीज़ कश्मीर में।

व : पतलून कन्याकुमारी में।

अफसर : फ़ाइलों का मामला है—

स : मामले में मामला है—

अ : भ्रष्टाचार का।

व : तबादलो का।

द : पागलों का।

स : अकाल जारी रखने का।

अ : राहत-शिविरों का।

व : मस्टररोल का।

द : ढोल की पोल का।

स : तीन और तीस का।

अ : आचार्य भजनीश का।

अफसर : मैं तुकबंदियों की तरफदारी करनेवालों को तरक्की नही देता।

अ : आप ताजीरात हिन्द में तशरीफ़ ले जाइये।

व : और बतलाइये—

स : कि उस अप्सरा से—

द : कौन शादी करे ?

अफसर : किस अप्सरा से ?

स : उस अप्सरा से जो वहाँ महल मे क़ैद है।

व : हम क़ैदी हैं। एक क़ैदी ही उससे शादी कर सकता है।

अफसर : (चहककर) मैं भी क़ैदी हूँ। केन्द्रीय सरकार द्वारा पंजीकृत क़ैदी।

दौड़कर महल के पास जाता है, युवती का निरीक्षण करता है और नेत्र बंद कर ध्यान-मग्न हो जाता है।

अ : गया।

ब : कहाँ गया ?

स : परलोक में।

द : वहाँ से कोई नया शगूफा लायेगा।

अफसर : (आँखें खोलकर) मैं अफसर बाद में, साधक पहले हूँ। असल में अफसरी भी एक साधना है। मैंने छठी संज्ञा यानी 'सिक्स्थ सेंस' द्वारा पता लगा लिया है कि तुम्हारे टेंडर-फ़ार्मों का तुलनात्मक रूप क्या है।

अ : टेंडर-फार्म ?

अफ़सर : मैंने तुम्हारे कोटेशन का गहरा अध्ययन किया।

ब : यह क्या बोल रहा है ?

स : सरकारी भाषा है।

अफसर : अन्ततः मैंने अपना नोट लगा दिया, जो इस प्रकार है—(ब से) तुम बढ़ई हो। तुमने पुतली का निर्माण किया। जो निर्माण करता है, वह क्या कहलाता है ?

द : निर्माता।

अफसर : निर्माता—पिता ! जैसे सृष्टि का निर्माण करने वाला कहलाता है—पिता परमेश्वर !

अ : सही है, बिलकुल सही है।

अफसर : तो तुम इस पुतली के पिता हुए, जनक। तुम इससे शादी नहीं कर सकते।

अ,स,द : धन्य हैं, आप धन्य है !

अफसर : (द से) राजगीर, तुमने परिश्रम किया। यू० आई० टी० से ज़मीन ली। नक्शा पास करवाया। मकान बनवाया। यह काम आवासन बोर्ड के चेयरमैन का है। किन्तु चेयरमैन को कतई हक नही है कि वह आवासन बोर्ड की कॉलोनी में रहनेवाली किसी सुन्दरी पर डोरे डाले। तुम्हें अपनी सीमाओं में रहना होगा और लोगों के सामने सदाचार का उदाहरण पेश करना होगा, ताकि भले परिवारो की लड़कियाँ तुम्हारी कॉलोनी में मकान ले सकें।

अ,म : जय हो, जय हो ! आपका न्याय जयपुर मिल्क सप्लाई स्कीम के दूध की तरह शुद्ध है, प्योर है।

अफसर : (अ से) जादूगर, तुमने जादू के जोर से पुतली में प्राण डाले। जो प्राणदान देता है, वह कौन होता है ?

अ : डॉक्टर।

अफसर : नही।

अ : वैज्ञानिक ?

अफसर : नहीं।

अ : इनकम-टैक्स आफिसर ?

अफसर : नहीं। न्यायाधीश। न्यायाधीश मुक्तिदाता है, जीवनदाता है, वह न जाने कितनों को प्राण देता है।

अ प्राणदंड भी तो देता है।

अफसर : बहस मत करो। प्राणदंड जल्लाद देता है, न्यायाधीश नहीं, जबकि प्राणदान सिर्फ़ न्यायाधीश ही देता है। (रुककर) निष्कर्ष यह निकला कि तुम्हारा प्रमोशन किया जा सकता है, तुम्हें हाईकोर्ट में भेजा जा सकता है, किन्तु अभियुक्त से रोमांस लड़ाने की इजाज़त तुम्हें नहीं दी जा सकती।

स : आपका वचन अन्तिम है। आप धर्मराज युधिष्ठिर के...।

अ : पी० ए० हैं। सत्यवादी हरिश्चन्द्र के हज्जाम हैं !

अफसर : शुक्रिया। (स से) दर्ज़ी, अब मैं तुम्हारी 'डिमांड' पर विचार करता हूँ। तुमने पुतली को सजाया, उसे अप्सरा बनाया और वह दर्जा दिया, जिसे पाकर कोई स्त्री सौभाग्यवती कहलाती है। पति का क्या कर्तव्य है ?

स : स्त्री को सजावट की वस्तु बनाना।

अफसर : ड्राइंग-रूम में सजाकर बिठलाना।

स : बाज़ार, सिनेमा, पार्क और पार्टियों में उसे ले जाना—दूसरों को यह दिखलाना कि, देखो, मेरे पास भी एक चीज़ है। पाउडर, लिपस्टिक जार्जेट, नेकलेस, लूप, सिन्दूर और मोगरे के फूलों से बनी हुई एक गोल-मटोल-सी चीज़।

अफ़सर : मैं तुम्हारे मौलिक चिन्तन से प्रभावित हुआ। (अ,ब,द, से) तुम लोगों को अपनी सफाई मे कुछ कहना है ?

तीनों चुप हैं। स रूमाल निकालकर अफसर के पांव पोंछने लगता है। फिर उसी रूमाल से अफ़सर का मुँह पोंछता है। अफ़सर नाक सिनकता है, तो स इत्मीनान से उसकी नाक साफ कर रुमाल अपने गले में बांध लेता है।

अफसर · (स से) धन्यवाद। बड़े-बुजुर्गों के प्रति तुम्हारा आदर-भाव प्रशंसनीय है। (ऊँचे स्वर में) अपनी हुकूमत की प्रस्तर-जयन्ती पर मैं यह फ़ैसला सुनाता हूँ कि इस चन्द्रमुखी मृगलोचनी पर तुम्हारा हक है।

स : (नत होकर) मैं हृदय से आपका आभारी हूँ।

अफसर : आभार से भार हल्का नहीं होगा। मित्र, मैं तुमसे एक वायदा चाहता हूँ।

स : आज्ञा दीजिये, मैं तैयार हूँ।

अफसर : तुम्हें समय-समय पर इस अप्सरा को मेरे गुप्त प्रकोष्ठ में भेजना होगा। स्वीकार है ?

स : स्वीकार है।

अ : हिजडा कहीं का !

ब : दोगला !

द : दलाल !

अफसर : (ब से) जानते हो, यह अप्सरा कौन है ?

अ : यह मेनका है जिसने विश्वामित्र का तप भंग किया।

अफ़सर : और सोचो।

स : यह उर्वशी है जिसने...।

अफसर : नहीं, यह राजसत्ता है जिसको पाने के लिए सब लालायित है। आज यह तुम्हारे वश में है और (अ, ब, द की ओर संकेत कर) ये तीनों प्रतिपक्ष के नेता हैं।

स : मैं आपकी दृष्टि का कायल हूँ।

अफ़सर : कायल होना ही पड़ेगा। मैंने तुम्हें भी पहचान लिया है। तुम बहुमत के दर्ज़ी हो। कभी योजनाओं की सिलाई करते हो, कभी आंकड़ों की तुरपाई। कभी विरोधियों की बखिया उधेड़ते हो तो कभी अपने ही दल के महत्त्वाकांक्षी लोगों की गर्दन पर कैंची चलाते हो। क्यों, ठीक है न ? (हँसता है।)

स : (खीसें निपोरकर) मैं तो जनता का सेवक हूँ।

अफ़सर : ऐसे सेवक हर पाँच साल बाद मेरी पतलून में आते हैं। मैं तो अफसर हूँ, सबकी खबर रखता हूँ। तुम्हारे और मेरे बीच यह समझौता हो चुका है कि हम राजसत्ता का मिलकर उपभोग करेंगे।

स : इसी में प्रजा का हित है। अफसर की...।

अफसर : (सबको चुप देखकर धीमे से) जँ !

सहसा नेपथ्य में कोलाहल मचता है। धरती हिलने लगती है।

स : (घबराकर) क्या है ? यह कैसा शोर है ? क्या क्रान्ति सफल हो गयी ?

अफसर : (मंच पर दौड़ता हुआ) कहाँ हैं राजा भोज ? किसी ने उसकी हत्या तो नहीं कर दी ?

अ : भूकम्प !

ब : धरती हिल रही है !

द : भूचाल आ गया ! भूचाल आ गया ! रक्षा करो, राजा भोज ! रक्षा करो !

युवती : (चीख मारकर) आग, चारों तरफ आग ! बचाओ, बचाओ !

स : बाढ़, चारों तरफ बाढ़।

अफसर : पानी, काला पानी ! पानी सिर तक आ पहुँचा।

स : गाँव डूब चुके हैं। शहर डूब चुके हैं।

अफसर : संसार डूब चुका है।

अ,ब,द : रक्षा करो, राजा भोज, रक्षा करो !

युवती : आग, आग ! राजभवन जल रहा है। बचाओ, बचाओ !

स और अफ़सर महल के दो खम्भों पर चढ़ने की कोशिश करते हैं। अ,म,द उठ-उठकर गिरते हैं और कूड़े में हाथ-पाँव मारते हैं। युवती लगातार चीख रही है। एकाएक उसकी निगाह गुलाब के फूल पर पड़ती है और वह लपककर उसे तोड़ लेती है।

युवती : (नाचती हुई) गुलाब का फूल, गुलाब का फूल !

सब : (घेरा बनाकर नाचते हुए) गुलाब का फूल, गुलाब का फूल।

युवती : (बीच में खड़ी होकर) यदि कोई समर्थ पुरुष इस गुलाब के फूल को धारण करे तो प्रकृति का यह प्रकोप टल सकता है।

अफसर : देश का संकट दूर हो सकता है।

अ,ब,द : (नाचते हुए) गुलाब का फूल, गुलाब का फूल।

स : मैं गुलाब के फूल की रक्षा का दायित्व अपने ऊपर लेता हूँ।

युवती : हे महापुरुष, अपने उन्नत वक्ष पर यह पुष्प धारण करो।

स के कुर्ते के बटन-होल में गुलाब लगाती है।

अफसर : मैं अब शपथ-ग्रहण समारोह की कार्यवाही प्रारम्भ करता हूँ।

स को अलग से ही शपथ दिलाता है।

बोलो—मैं अचकन और शेरवानी की शपथ खाकर कहता हूँ कि मैं शेर की तरह दहाड़ता रहूँगा—फाड़ता रहूँगा कपड़े और कागज़—अतीत की गर्द झाड़ता रहूँगा—मैं नभ में विचरण करूँगा और चाँद-सितारों से दुनिया की झोली भरूँगा।

स शब्दशः दुहराता है।

अ,ब,द : (गाते-नाचते)

बाढ़ आये, आने दो
आग लगे, लग जाने दो
टूट पड़े चाहे आकाश

होऽऽभूचाल, होऽऽभूचाल
दुख दर्द सब को जा भूल
और दिन-रात अधर मे झूल
गुलाब का फूल, गुलाब का फूल।

सभी 'गुलाब का फूल' गाते हुए नाचते हैं। मंच पर अँधेरा घिर जाता है। अचानक गायक-मंडली 'गुलाब का फूल—गुलाब का फूल' आर्तनाद कर उठती है। कुछ क्षण एक उदास धुन तैरती रहती है। फिर बेचैन-सी शान्ति। धीरे धीरे पर्दा गिरता है।

मध्यान्तर।

## उत्तरार्द्ध

प्रकाश-वृत्त बनते ही मंच के अग्रभाग में युवती और लेखक करबद्ध मुद्रा में खड़े हैं। पीछे जेल के हिस्से में धुंधलका है, पर अ, ब, स, द के चेहरे नजर आ रहे हैं। ये चारों अपनी-अपनी जगह पर स्थिर हैं।

लेखक, : स जयति सिन्धुरवदनो देवो यत्पादपंकज स्मरणम्

युवती : वासरमणिरिव तमसा राशिन्नाशयति विघ्नानाम्।

लेखक : उस गजवदन देवाधिदेव की जय हो, जिसके चरण-कमलो का स्मरण मात्र नाना विघ्नों को इस प्रकार नष्ट कर देता है, जैसे सूर्य अथाह अन्धकार को...।

युवती : हे प्रभो ! हमे क्षमा करो। हम बीसवी शताब्दी के नास्तिक जन्तु तुम्हारी कीर्तिगाथा भूल चुके है।

लेखक : हम अधर्मी है, नरकीट हैं, पापात्मा हैं, दंड के भागी हैं।

युवती : हमने नाटक के प्रारम्भ में तुम्हारा स्मरण नही किया। यह हमसे भूल हुई। इसका कुफल भी हमें भोगना पडा।

लेखक : दर्शकों ने हमे देखकर मुँह बनाया। नाटक में जगह-जगह गाँठें पड़ गयीं, जिसे न अभिनेता सुलझा सके, न निर्देशक। नाट्य-समीक्षक हमारी ओर घूर-घूरकर देखता रहा।

युवती : कथानक में उथल-पुथल मची रही।

लेखक : राजा भोज मारे गये। ऐसा प्रतापी नरेश भला अब कहाँ मिलेगा ?

युवती : राजभवन में आग लग गयी। स्वर्णमंडित स्तम्भ और गगनचुम्बी गुम्बज जलकर राख हो गये।

लेखक : क्रान्ति सफल हुई कि विफल, कुछ पता नही चला।

युवती : किसको हरियाली की सजा मिली, किसको काले पानी की परम

शान्ति, कुछ स्पष्ट नहीं हुआ।

लेखक : कहीं पर खिल रहा था कोई गुलाब का फूल और उसे एक राज-पुरुष बटनहोल में लगाकर चला गया।

युवती : हमने बार-बार अभिनय को जीवन्त, दृश्यों को यथार्थवादी और संगीत को संशयवादी बनाने की चेष्टा की, पर असफल रहे।

लेखक : अब हम क्या करें ? कैसे दर्शकों का हृदय जीतें ? कैसे अपने नाट्यदल की प्रतिष्ठा बचायें ? कैसे आलोचक को प्रसन्न करें ?

युवती : हे गणेश, हे शिव, हे नटराज ! मध्यान्तर के के बाद, हम तुम्हें साष्टांग प्रणाम करते हैं। हमें सुमार्ग दिखलाओ, सफल बनाओ !

लेखक : हे विधाता, जिस प्रकार ज्वरग्रस्त होने पर मनुष्य को वैद्य का ध्यान आता है, उसी प्रकार विपत्ति पड़ने पर ही आजकल देवताओं को याद किया जाता है।

युवती : जिस प्रकार खोटा पैसा और कुकर्मी पूत आड़े वक्त मे काम आते हैं, उसी प्रकार देवताओं की परीक्षा भी विपत्तिकाल में ही होती है।

लेखक : हे कृपानिधान, हम रिश्वत देने के पक्ष में नहीं हैं और न ही देवगणों को लोभी मानते हैं। पर इतना अवश्य कह सकते हैं कि यदि नाटक सफल हुआ तो कुछ-न-कुछ प्रसाद चढ़ायेंगे ही।

युवती : अब यह तुम पर निर्भर है कि तुम प्रसाद से वंचित रहना चाहते हो या कुछ उपलब्धि की कामना करते हो।

लेखक, युवती : इन शब्दों के साथ ही, हे सर्वशक्तिमान हम दिग-दिगन्त में तुम्हारी जय-जयकार करते हैं।

**दोनों का प्रस्थान। मंच का पृष्ठभाग प्रकाशित होता है। सबसे पहले जेल की ऊँची, भद्दी दीवार चमकती है। फिर कोने में रखे हुए तसले, बाल्टी, लोटे, स्टूल आदि सामान को टटोलती हुई रोशनी अ, ब, स, द के चेहरों पर झुक जाती है। द काठ पर रन्दा चला रहा है। स पायजामा सी रहा है और अ निठल्ला-सा कभी-कभी जादू की अँगूठी को जमीन पर घिसने लगता है।**

द : अभी तक नहीं आया सन्तरी तबीयत तो ठीक है उसकी ?

अ : तुम्हें चैन नहीं है उसके बिना ?

स : बवासीर का मरीज है वो। पड़ा-पड़ा टसक रहा होगा।

ब : वो यहाँ आये तो मैं उसके मस्सों पर चूना लगा दूँ।

द : कुछ नहीं रखा इन बातों में। अपना चाल-चलन ठीक रखो और जुबान मत हिलाओ।

अ : इन्तज़ार करो, इन्तज़ार।

ब : किसका इन्तज़ार करें ?

अ : अपनी रिहाई का।

ब : जा धे रोद के, उमरकैद से कभी कोई छूटा है।

अ : नये राजा की खोज हो रही है। ज्यों ही कोई मँहूरा मिल जायेगा, हमारे दिन पलटेंगे। राज्याभिषेक पर कई कैदियों को रिहा किया जायेगा।

स : यह पारानगरी की परम्परा है।

ब : कैदियों की छँटनी का क्या तरीका रहेगा ?

स : जिसका चरित्र ठीक होगा, सन्तरी उसकी सिफारिश करेगा।

ब : चरित्र कोई यों ठीक होता है ?

स : कुछ तो करना ही पड़ेगा।

अ : इस बिना हड्डी की जीभ को वश में रखो, सब मामला ठीक हो जायेगा।

स : दीवारों के भी कान होते हैं।

अ : हाँ, दीवारें सुनती हैं। बड़े ध्यान से सुनती हैं।

द : अरे, यह जो दीवार है न, बड़ी पाप है, एकदम एक रंडी की तरह। पिछली सर्दियों की बात है, रात को बिस्तर में पड़ा-पड़ा मैं करवटें बदल रहा था। नींद नहीं आ रही थी। मेरे मुँह से यों ही निकल गया—जाड़े की रात में औरत का साथ न हो, तो ठंड काटने को दौड़ती है। उसी क्षण मैंने देखा, यह दीवार नीचे झुकी और मेरी रज़ाई में घुस गयी। धीमे से कान में बोली—ओये ऊँट, अगर तुमने फिर कभी औरत को याद किया तो सन्तरी से शिकायत कर दूँगी। यह सुनते ही मुझे पसीना आ गया।

ब : पसीना तो आना ही था। दीवार दीवार होती है, औरत औरत।

अ : तो तुम रात-भर दीवार के साथ सोते रहे।

अ, ब, स ठहाका मारकर हँसते हैं।

द : तुम लोगों के लिए तो दिल की लगी भी दिल्लगी है।

स : (ब से) क्या खयाल है, राजकुमारी को कोई जोड़ीदार मिल जायेगा ?

ब : क्या कमी है कौरवों की ? पृथ्वी अभी वीरों से खाली नहीं हुई है।

अ : फिर राजकुमारी जिसे पसन्द करेगी, वही तो नया राजा बनेगा।

स : सुना है, भँवरे मँडराने लग गये हैं।

ब : तुमने कल का 'भारत-सन्देश' पढ़ा ?

स : नहीं, कुछ था उसमें ?

ब : हाँ, समाचार था कि अपना मणि मधुकर भी उम्मीदवार है।
स : कौन मणि मधुकर ?
ब : अरे नाटककार, नौटंकिया !
अ : बड़ा चालू आदमी है।
द : चरखा कहीं का !
ब : धीरे बोलो, यह नाटक उसी ने लिखा है।
द : तब तो हो गया नाटक।
अ : संवाद इतने बेजान है कि जैसे मिट्टी के ढेले।
ब : धुरन्धरों का कहना है कि नाटक में मिट्टी की गन्ध तो आनी ही चाहिए।
द : फिर गोबर की क्यों नहीं ?
अ : (खुश होकर, द से) जिओ, जिओ, गुड़ का शरबत पिओ।
द : (जीभ लपलपा कर) पिलाओ, पिलाओ, कहाँ है शरबत ?
स : सवाल यह है कि राजकुमारी तक मणि मधुकर की एप्रोच कैसे हो गयी ? क्या वह भी राजसत्ता की रस-मलाई खाना चाहता है ?
ब : एक पल के लिए सोचो, राजकुमारी ने उसी को चुन लिया तो ?
द : गजब हो जायेगा।
अ : भारतवर्ष और भारतनाट्यम में कोई फ़र्क ही नहीं रहेगा।
स : सेक्रेटेरियट के बाबू कत्थक के तोड़ों पर नाचेंगे।
द : संविधान कविता मे लिखा जायेगा।
अ : और राष्ट्रगान गद्य में।
स : आई० ए० एस० में कव्वाल लिये जायेंगे।
द : राजदूत सब तबलची होंगे।
अ : और विदूषक विश्वविद्यालय के विभागाध्यक्ष।
ब : आक्-छी ! आक्-छी ! छतर छपो, छतर छपो ! छगनू बोला—राम जपो, भई राम जपो।
स : छींक दिया इसने।
अ : अपशकुन हो गया। ऐसे मौक़े पर छींकने वाले की नाक काट कर जमुनाजी में डाल देनी चाहिए।
स : देखना, अब राजकुमारी मणि मधुकर को नहीं चुनेगी।
द : रह गया बेचारा नौटंकिया। नाटक लिखकर भी वह चुनाव के महा-नाटक मे हार गया।
स : मेरे पास कपड़े-लत्ते ढंग के नहीं है, वरना—सोच तो रहा था मैं भी कि स्वयंवर के कम्पटीशन मे उतरूँ।

अ : आईने में अपना चौखटा देखा है कभी ?
द : न देखा हो तो, उस बाल्टी में पानी है, जाकर देख लो।
अ : बाप न मारी मेंढकी, बेटा तीरन्दाज !
ब : इशी-ई ! (चुप रहने का संकेत देता है) सुनायी दे रहा है कुछ ? सब सुनने की कोशिश कर रहे हैं। बैंसाखी की ठक-ठक नजदीक आ रही है।
स : आ गया लंगडदीन।
ब : स्टूल ठीक से रख दो।
द : (स से) टांके जल्दी-जल्दी लगाओ।
स : (ब से) एक पत्थर ऊपर और रख दो।
ब : (द से) रन्दा तेजी मे चलाओ।
अ : जुट जाओ, जवानो ! जंग मे जुट जाओ।
स : तुम खुद क्या कर रहे हो ?
अ : मैं नाखून चबा रहा हूँ।
स : सन्तरी तुम्हें कच्चा चबा जायेगा।

सन्तरी का लड़खड़ाते हुए प्रवेश। मुड़ी-तुड़ी वर्दी। बैंसाखी। बन्दूक। जब वह लेखक के रूप में था, चेहरे पर कोमलता थी; अफ़सर था, तो कठोरता थी; अब सिर्फ दरिद्रता और धुन्ध है। उसके आगमन पर गायक-मंडली और क़ैदी सिर हिलाते हैं। सन्तरी बैंसाखी के सहारे नाचता-मटकता है।

गायक-मंडली :

काठ के घोड़े पर होकर सवार।
आये जी आये देखो बाँके सरदार।
अइहो—चक्करघिन्ना—चक्करघिन्ना—चक्करघिन्ना।
चलें वो तो चारों ओर धूल उड़े।
(ना रे बाबा ना, दुलत्ती मार देगा !)
आँ-हाँ चलें तो चारों ओर खुशबू उड़े
बोलें तो होंठों से मोती—हाँ—हाँ—मोती
(मोती-जवाहर का जमाना नहीं रहा अब !)
आँ-हाँ बोलें तो होठों से थूक गिरे
हँसें तो तड़तड़ातड़ ओले पड़ें
अइहो—सुम्मड़सिन्ना—सुम्मड़सिन्ना—सुम्मड़सिन्ना।
काठ की टँगड़ी पर लँगड़ा सवार।

फदक-फदक चले देखो बाँका सरदार।
अहहो—चक्करघिन्ना—चक्करघिन्ना—चक्करघिन्ना।

सन्तरी : (एकदम घुड़की भरे स्वर में) तुम सब कामचोर हो। अव्वल दर्जे के आलसी और बदमाश!

चारों क़ैदी इस प्रहार से सकपका उठते हैं।

द : मैं काठ की संदूकची बना रहा हूँ।

ब : मैं इमारत के भीतर भारत का निर्माण कर रहा हूँ।

स : मैं काल-भैरव का कफन सी रहा हूँ।

अ : मैं दांत कुरेद रहा हूँ।

सन्तरी : वही चिरन्तन शास्त्रीय गायन—मैं, मै, मैं। क्या किया तुम लोगों ने आज तक, ऐश और हरामखोरी के सिवाय? क्या तुम्हे अपनी इज्जत का ज़रा भी खयाल नही?

अ : इज्जत!

सन्तरी : हाँ-हाँ इज्जत। एक कैंदी की भी इज्जत होती है। अगर वह मेहनती है, ईमानदार है, नेक है तो उस पर भरोसा किया जाता है।

ब : पत्थरों का कोई भरोसा नही।

द : रन्दा चलाते-चलाते आदमी की शक्ल रन्दे जैसी हो जाती है।

स : सुई सन्निपात में चलती है।

अ : दांतों में जाने कितना मैल इकट्ठा हो गया है। सौ साल तक सफाई करनी होगी।

सन्तरी : (डांटकर) गपड़चौथ मत करो। (अ से) तुम हाथ पर हाथ धरे क्यों बैठे हो, जी?

अ : बात यह है कि...कोई बात बन ही नही रही है।

सन्तरी : (स से) तुमने हवलदार रसाब का पायजामा तैयार किया?

स : वो.. सन्तरीजी, सवाल पायजामे का नहीं है।

सन्तरी : तो किसका सवाल है? मैं तुम्हारी रग-रग पहचानता हूँ। टुक्कड़खोर! मुझे शर्म आती है यह देखकर कि पूरे अठारह दिन से हवलदार साब बिना पायजामे के घूम रहे हैं।

अ : महाभारत का युद्ध अठारह दिन तक चला था।

स : लेकिन उन्होंने कुछ तो पहन ही रखा होगा।

सन्तरी : और कुछ पहनने से क्या मतलब? उन्हें पायजामा पहनाना मेरा फर्ज़ है।

स : अगर यह सुई सार्वजनिक क्षेत्र मे चलती रहे तो मैं किसी को शिकायत का मौका नही दूंगा।

सन्तरी : क्या खराबी है सुई में ?

स : नोंक टूट गयी है।

सन्तरी : बदल क्यों नहीं लेते ?

स : मुझे बदलाव में विश्वास नहीं है।

सन्तरी : भाड़ में जाओ।

स : जा रहा हूँ। (उठकर चल देता है।)

सन्तरी : कहाँ जा रहे हो ? टाँगें तोड़ दूँगा।

स : एक तो टूटी हुई है।

सन्तरी : क्या कहा ?

स : भूख लगी है।

अ : इसकी आँतों में केंचुए हैं।

ब : किसकी आँतों में नहीं हैं ? तुम्हारी आँतों में तो बिच्छू हैं।

अ : मेरे गर्भाशय में नेवले हैं।

ब : गर्भाशय नहीं, आमाशय।

अ : मातृभाषा के शब्दों में हेर-फेर सम्भव है।

ब : (अ से) तसला-बाल्टी लेकर अभी से लंगर में जाओगे तो खाना मिलेगा। जाओ। जल्दी करो।

सन्तरी : (इधर-उधर मुआयना करता हुआ) कितनी गन्दगी फैला रखी है !

अ : तुम रोज़ सुबह से ही खाना लाने के लिए क्यों कहते हो ?

ब : इसलिए कि तुम अड़ियल टट्टू हो।

स : लाइन में खड़े रहने का धैर्य रखते हो।

द : तुम्हारे पास जादू की अँगूठी है।

अ : (खुश होकर) मुझे अपने गुणों का पूरा ज्ञान है। पर तुम्हारे लिए मेरे मन में बेहद अफ़सोस है। काश, एकाध गुण तुम लोगों में भी होता !

सन्तरी : कितना कचरा बिखरा हुआ है ! आज झाड़ू क्यों नहीं लगायी गयी ?

अ : (भावावेग में) मैं चाहता हूँ कि क़ैदियों के रहन-सहन का स्तर ऊँचा उठे। वे एक-दूसरे की बात को समझने की कोशिश करें। उनके मन में संस्कृति के प्रति निष्ठा और सह-अस्तित्व की भावना हो। जातीय अभिमान,...।

सन्तरी : मैं पूछता हूँ, झाड़ू कहाँ है ?

द : (अ की तरफ़ अँगुली उठाकर) इसके मुँह में।

स : (अ से) बस बहुत हो गया। अब जाकर खाना ले आओ।

अ : जिसे तुम खाना कहते हो, वह सड़ी हुई चपातियों और दाल में तैरती हुई मक्खियों का एक खतरनाक घोल है जो हमारी नसों में घुल गया

राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली की प्रस्तुति में

परी की भूमिका में उत्तरा बावकर

मनोहरसिंह (संतरी) श्रौर चारो क़ैदी

गन्धर्व वेश में सहगान
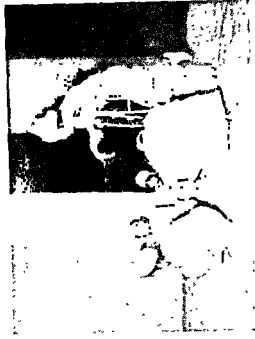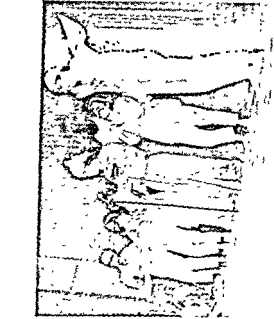
बलराज पंडित, उत्तरा बावकर, मनोहरसिंह, ज्योति देशपांडे और राजन सब्बरवाल . फन्तासी के एक रोमांचक दृश्य में

है। हम पशु होते जा रहे हैं। लेकिन...मैं चाहता हूँ कि किसी तरह इस ज़हर से छुटकारा मिले, पशुता का अहसास खत्म हो, मानवता का विस्तार हो...।

सन्तरी : मुझे मालूम है, सफाई के डर से तुम लोगो ने झाड़ू कही छुपा दी है। मैं जुरमाना लगाऊँगा।

ब : (अ से) क्या तुम चाहते हो कि हम तुम्हारा अभिनय देखते रहें और उपवास रखें ?

स : मानवता के विस्तार के लिए भूखे मरें ?

अ : पता नही, मैं क्या चाहता हूँ। मुझे कोई भी नही समझ पायेगा। मेरे दिल मे इतना धुआँ है कि...।

द : उपलों का धुआँ है या गीली लकड़ी का ?

अ : (रुष्ट होकर) मुझे तुम जैसे पालतू पिल्लों की बिलकुल परवाह नही। मैं अपना रास्ता जानता हूँ। मुझे अभी बहुत-कुछ करना है।

द : मसलन, सबसे पहले तो हमारे लिए खाना ही लाना है।

**अ कोने से तसला उठाता है। बाल्टी को औंधा कर पानी फैला देता है, फिर उसे हाथ में लटकाकर चल देता है। दूर लंगर का शोर हो रहा है।**

सन्तरी : इतनी गंदगी ! ओह, यह गलाजत ! मताधिकार का यह दुरुपयोग !

ब : सन्तरीजी, तुम काहे को गन्दगी की फिक्र करते हो ? गन्दगी तो हमारे खून मे है।

स : उससे कभी मुक्ति नही मिल सकती।

द : यहाँ छिपकलियाँ है और पिस्सू भी।

सन्तरी : मुझे अपने कार्यक्षेत्र में स्वच्छता रखने का आदेश मिला है।

स : तुम्हे आदेश का पालन करना चाहिए।

द : चाहो तो बन्दूक से झाड़ू का काम ले सकते हो।

ब : ऐसे अनेक उदाहरण मिलते है, जब यह उपाय अत्यन्त कारगर सिद्ध हुआ।

स : वियतनाम में बन्दूक से झाड़ू का काम लिया गया और सफाई हो गयी।

द : बंगला देश मे भी यही हुआ था।

सन्तरी : (भौचक-सा) मैं तुम्हारे सुझाव पर विचार करूँगा। (स्टूल पर बैठ जाता है।)

ब : गम्भीर विचार-मन्थन के लिए नीद का सहारा अनिवार्य है।

सन्तरी : ठीक है, ठीक है। (बैसाखी से टिककर आँखें मूँद लेता है।)

स : गुबरैला !

द : कुतिया का यार !

ब : (उठकर) मेरी परखनली भर चुकी है।

द : पाप की परखनली।

स : धागा बाँध लो।

ब : अरे भई, धागा कब तक बँधा रहेगा। (दीवार के दूसरे कोने में जाकर खड़े-खड़े पेशाब करता है।) अपने शरीर के पाँच तत्वों का कभी विरोध नहीं करना चाहिए।

स : आवाज़ मत कर।

ब : अपने-आप हो रही है।

द : (सन्तरी की ओर देखकर) सो रहा है, लँगडा रीछ।

ब : (वहीं से) नीद मे नाक बजती है, मौत में नही बजती।

अ : मौत का ज़िक्र मत करो, मुझे डर लगता है।

द : डरने वाले से मौत दूर रहती है। पहले-पहल मुझ पर मुकदमा चला तो मन मे भय था कि जरूर फाँसी होगी। जज को मेरे डर का पता चल गया और उसने आजन्म कारावास की सजा सुना दी।

ब : (दीवार से चेहरा सटाकर) दुनिया कितनी खूबसूरत है !

स : वह सूराख में आँख लगाकर देख रहा है, उधर की दुनिया।

द : जेल से बाहर की दुनिया।

ब : सब कुछ उजला और नीला।

स : (उपेक्षा दरशाकर) हमेशा की तरह।

द : वह आसमान को दुनिया समझ रहा है।

स : शायद उसे उधर को दुनिया नजर आ गयी हो। सूराख काफ़ी बडा है।

द : मुझे फूल अच्छे लगते है। मैदानों में घोडे आकर्पित करते हैं। मैं जब उस दुनिया मे था तो रेसकोर्स मे दाँव लगाया करता था।

स : डींग मत हाँको। ऐसी बेवकूफियों से मेरा कोई वास्ता नही।

ब : उधर बारिश हो रही है। तुम दोनों को बादलों की गरज सुनायी दे रही है न ?

स : वह सन्तरीजी के खर्राटों को बादलों की गरज समझ रहा है।

द : मेरा ख़याल है, उधर बारिश हो रही होगी।

स : अपने ख़यालों को तुम थूथनी पर मसल लो।

द चुपचाप ब के पीछे जाकर खड़ा हो जाता है।

ब : मुझे एक लड़की नजर आ रही है।

द : लडकी ? सचमुच ? जरा मुझे भी देखने दो।

स : इतने-से सूराख मे लडकी। झूठ का कोई अन्त नही।

द : (नाक दबाकर) बदबू आ रही है।
स : उस तरफ एक नाला है। जेल की तमाम गन्दगी उसमे जाती है।
ब : (चेहरा हटाकर) लड़की नही थी।
द : (खिन्नता से) तो ?
ब : बकरी थी। मैंने समझा, काला कार्डिगन पहने हुए है।
स : कार्डिगन ? इस भयंकर गर्मी मे ? वाह, जवाब नही !
ब : (द से)इसे बकने दो। तुम्हे देखना हो तो आँख लगाकर देख लो। शायद कोई और चीज़ दीख जाये।
द : मेरा दिल ज़ोर से धड़क रहा है। मैं ऐसे मौकों पर घबराने लगता हूँ।
ब : आत्मबल पैदा करो। उधर की दुनिया में ताक-झाँक करना इतना आसान काम नही। ज़रा एड़ियाँ उठाओ। सिर टेढ़ा। गर्दन सीधी। अब देखो।

> द सूराख में आँख लगा कर देखता है, फिर चिहुँककर पीछे हट जाता है।

ब : क्या हुआ ?
द : दुर्घटना। एक दु:खद दुर्घटना।
स : (गायक-मंडली के साथ गाता हुआ )

जहाँ घटना नही हो कोई
—वहाँ घट-घट में होती रहती है दुर्घटना।
जहाँ चढने-गिराने का एक ही फंदा,
पटने-पटाने का
चलता है धंधा
—कहते है उसको पटना।
चाहे चण्डीगढ, मद्रास हो
हैदराबाद खास हो
'हाँ' कहो आयाराम
'ना' करो गयाराम
लालकिले से बोल रहा है ढुलकीराम।
बचके होऽ बचके
बचके रहना इन तीनो से मुलकीराम।
नहीं तो पड़ेगा
अधर-बीच में
काले कीच में
बरसों तक तुमको रपटना, रपटना, रपटना !

घट-घट में होती रहती है दुर्घटना !!

ब : तुमने कोई ऐक्सीडेंट देख लिया था सूराख में से ?

द : सफ़ेद रंग का जाला।

ब : जाला ?

द : बिलकुल सफेद, जैसे रूई। और मकड़ी की टाँगें। (चीखकर) मकड़ी !

ब : जल्दबाज़ी में घोषणा मत करो। आँखें कई बार धोखा खा जाती हैं।

द : मैंने मकड़ी को चलते-फिरते देखा है, उस जाले में।

ब : जिसे तुम मकड़ी कह रहे हो, हो सकता है, वह सन्त अलसाँई बाबा की पताका हो और उसका शुभ्र-श्वेत रंग धूप मे चमक रहा हो।

द : जहाँ तक मैं सोचता हूँ...।

ब : यह सोचने का विषय है ही नहीं। तुम्हारे सोचने मे अलसाँई बाबा की पताका और धनपतियो की श्रद्धा पर तो कोई असर पड़ेगा नहीं।

स : (ब के लिए) हे ईश्वर! इस रंडुवे का दिमाग़ तो वाकई उलट गया है।

ब : (खीझकर) मुझे मालूम है, तुम पर कभी-कभी आस्तिकता का दौरा पड़ता है। इस रोग पर तुम्हारा कोई वश नहीं।

स : दौरा तो तुम पर पड़ता है—*कपोल-कल्पनाओं का।*

द : (**अपनी जगह पर लौटकर**) सत्यानाश जाये तुम्हारा !

**तभी सन्तरी स्टूल पर से लुढ़क पड़ता है। लमहे-भर के लिए वह चुंधी-चुंधी आँखों से आस-पास देखता है, फिर फ़र्श पर लम्बटंग हो जाता है।**

ब : देखा ? कसर रह गयी है सत्यानाश मे !

द : सन्तरीजी गिरे और संसार को पता तक नहीं चला।

स : मैंने सोचा था, वह नाराज़ होगा।

ब : किस पर ?

स : स्टूल पर।

द : हाँ, स्टूल ने सन्तरीजी को गिरा दिया।

ब : स्टूल ने नहीं, बन्दूक ने।

स : इस मसले पर तीन दिन तक बहस हो सकती है।

ब : (**अपने स्थान पर आकर**) छह-सात बरस पहले, सन्तरी भी हमारे साथ कैदी था, चौदह नम्बर की बैरक में।

स : तुम्हारा पुराना दोस्त है।

ब : दोस्त नहीं, दुश्मन। वह कई बार मुझसे पिट चुका है। एक दफा उसने मेरे मोज़े चुरा लिये। मैंने चाबुक से मार-मारकर उसकी चमड़ी उधेड़ दी। वह बहुत रोया। गुरु गोरखनाथ के नाम की दुहाई दी।

मैंने साफ बोल दिया---ऐसी की तैसी तेरे गोरखनाथ की, ग्राज तो मलीदा बनाकर ही छोड़ूंगा ।

द : यह कोई किस्सा है या हकीकत ?

ब : वाल की खाल मत निकालो । किस्से मे से हकीकत निकलती है ग्रौर हकीकत मे से किस्से की कारीगरी । जैसे मुर्गी में से ग्रंडा निकलता है ग्रौर ग्रडे में से चूजा । वात वही की वही ।

द : ग्रव तो मैं ग्रंडे का जायका ही भूल गया ।

स : ग्रौर मैं चूजे का ।

द : उधर, उस दुनिया मे, जहां मेरा घर है, उसके ठीक सामने एक सरदार का ढावा है । उसका बनाया हुग्रा ग्रामलेट ग्रफगानिस्तान तक मशहूर है ।

ब : ग्रपना सन्तरी भी सरदार है । पहले हम उसको प्यारासिंह कहते थे । पर जब से ग्रोहदा बदला, जन्म का नाम गायब हो गया ।

स : जेल के कायदे-क़ानून जाने क्या-क्या गायब कर देते हैं ।

द : हथकड़ी पड़ते ही हड्डी तंग हो जाती है ।

स : पोशाक पहनने के बाद पुरखों तक का पानी उतर जाता है ।

ब : हमारी दुनिया उस दुनिया से ग्रलग है ।

स : गिले-शिकवों से लबालब ।

द : चुगलियों मे चमत्कारपूर्ण ।

ब : मुझे वे दिन ग्रच्छी तरह याद हैं, जब सन्तरी एक मामूली कैदी था । हमारे साथ काम करता था । जमीन पर लेटता था । हाजमा ठीक न रहने के कारण हरामी हर घडी पादता रहता था । हम उसे ठोकते थे । वह हमारे पांव चांपता था । लेकिन ग्रचानक उसमें तबदीली ग्रायी । उसने जासूसी करना शुरू कर दिया । छोटी-से-छोटी बात भी वह सुपरिटेंडेंट से जाकर कह देता था । हर किसी की चुगली खाता था । नतीजा यह हुग्रा कि कुछ समय बाद वह हाकिम बना दिया गया—हमारा हाकिम ।

स : (दर्शकों की ग्रोर) यहां जितने भी हाकिम हैं, सब इसी तरह तरक्की पाये हुए है ।

द : वो चमगादड़ ग्रभी तक खाना लेकर नही ग्राया । भूख लग ग्रायी है ।

ब : ग्राता ही होगा । वो भी एक ही ग्रजूबा है ।

द : ग्रजायबघर में रखने लायक है ।

स : लंगर में दंगा-फसाद न हो गया हो । भड़भूंजे हैं सब । भूख के मारे लड़ पड़ते है ।

ब : कैदी लोग क्या ख़ाक करेंगे दंगा ? दंगे तो उधर होते हैं, उस दुनिया में। बारहों महीने प्रोग्राम चलता रहता है। हिन्दू-मुसलमानों के दंगे, जाट-राजपूतों के दंगे, ग्राहक-दुकानदारों के दंगे, बोहरों-सोहरों के दंगे। मज़ा आ जाता है। सबको एक तरह से सामूहिक व्यायाम करने का अवसर मिल जाता है।

स : तुमने भी दंगा किया था ?

ब : मैंने प्यार किया था। (उदास हो जाता है।)

द : प्यार ? यह तुमने क्या किया ?

स : सुनाओ, हमें अपनी दास्तान सुनाओ। सुनने से दुःख हल्का होगा।

ब : सुनोगे ?

स,द : आहो।

ब : गड़बड़ तो नहीं करोगे ?

स,द : नाहो।

ब : (भावुक होकर) मेरी प्रेमिका का नाम...सुनोगे ?

स,द : आहो।

ब : गड़बड़ तो नहीं करोगे ?

स,द : नाहो।

ब : (आश्वस्त होकर) मेरी उस प्रेमिका का नाम था—सल्लो !

द : दमक-दल्लो।

ब : सुलोचना चटर्जी।

द : (अँगुली चाटकर) चटर्जी।

ब : वह मुझसे बारह साल बड़ी थी।

स : शादीशुदा होगी। आधा दर्जन बच्चे भी होंगे।

ब : कुँआरी थी। न एक भी पति था, न एक भी बच्चा।

स : तब तो तुम्हारी पाँचों अँगुलियाँ...।

द : उसने ब्लाउज में रहती होगी।

ब : मैं क्रिकेट खेलता था। रणजी ट्राफी में जब मैंने पहली सेंचुरी बनायी तो उसने मैदान में आकर मुझे चूम लिया।

स : यह मुँह और मसूर की दाल !

ब : मैच के बाद वह मुझे अपने साथ ले गयी। वह पटेलनगर में एक कमरा लेकर रहती थी अकेली !

द : फिर तो तुमने वहाँ खूब चौके-छक्के लगाये होंगे।

ब : वह बहुत खूबसूरत थी।

द : भूरी-भूरी मेम जैसी ?

स : साँवली-सलोनी केरला-ब्यूटी ?
ब : उपमाएँ मत दो। वह तमाम उपमाओं से ऊपर थी।
द : यानी ताड की तरह लंबी थी।
स : हथिनी की तरह मोटी।
द : कैरमबोर्ड की लाल-लाडली गोटी।
स : (पार्श्व मे देखकर) कहाँ रह गया वो खटमल ? कही लंगर में लट्टू घुमाने तो नही लग गया ?
ब : उसकी ठुड्डी पर तिल था।
स : (चिढ़कर) और फुटबाल जितना बडा मुँहासा भी।
द : लडकियों को फुसियाँ फोड़ने मे बहुत आनन्द आता है।
ब : घुंघराले बालों को वह माथे पर झुका लेती थी या खुला छोड़ देती थी। समुद्र के किनारे तो वह अक्सर रिबन खोलकर पर्स मे रख लेती थी।
स : पेटीकोट खोलकर कहाँ रखती थी ?
द : बाँस पर टाँग देती होगी।
स : नटिनी थी क्या ?
द : इसको अपने खरबूज़ों पर बिठलाकर नचाती होगी।

**अ घबड़-घबड़ करता हुआ आता है। तसले में रोटियाँ, बालटी मे दाल है।**

अ : नाच न जाने आँगन टेढ़ा। रसोइया न रोटी सेकना जानता है, न दाल बनाना। पूछो, दाल पतली क्यों है, तो जवाब देता है—बटलोही में नल खुला रह गया था। जली हुई रोटी दिखलाओ, तो कहता है—ये तो मेरे दिल के दाग है। दिल के दाग हमारे खाने के लिए !

**तसले की रोटियाँ उठाकर स, द, ब के मुँह पर दे मारता है।**

अ : लो खाओ, मुक्खड़ भिखारियो ! यही तुम्हारा कर्मफल है। मुझे तुम पर तरस आता है।
स : आता है।

**बालटी की दाल में रोटी डुबा-डुबाकर खाने लगता है। द और ब भी ऐसा ही करते हैं।**

अ : तुम लोग कितने स्वार्थी, कितने ओछे, कितने पोचे हो !
द : पोचे हो।
अ : तुम इन बुस्सी-बेकार रोटियों पर मँगते की तरह टूट पडते हो। बेशरम !

**वह खुद झपट्टा मारकर एक-दो रोटियाँ लेने को कोशिश करता है, पर ब, स, द उसे जबरन परे धकेल देते हैं।**

स : बेशरम !

अ : मैंने देखा कि और बैरकों के क़ैदी किस तरह आत्मा की ऊँचाई पाने के लिए बेचैन हैं, और तुम ?

द : और तुम ?

अ : कितना मानते हैं वे मुझे। जब मिलता हूँ, तारीफों के पुल बाँधने लगते हैं। मैं समझाता हूँ, यारो, मुझे देवता मत बनाओ, आदमी ही बना रहने दो, पर वे कहते हैं, नहीं, भाई, तुम तपस्वी हो, त्यागी हो—साक्षात महासिद्ध !

फिर झपटता है, लेकिन कुछ भी पाने में असमर्थ रहता है।

स : गिद्ध !

अ : मैं जब लंगर में गया तो क़ैदी धक्का-मुक्की कर रहे थे। लाइन तोड़ रहे थे। भाईचारे की भावना का उनके लिए कोई मूल्य नहीं रह गया था। मैं हतप्रभ रह गया। मैंने उनकी सुप्त चेतना को जगाया। भाइयो ! तुम क्या कर रहे हो ?

द : (ब के हाथ से रोटी छीनकर) क्या कर रहे हो ?

अ : वे रुक गये। उनकी दृष्टि मुझ पर केन्द्रित हो गयी। तब मैंने आधे कनस्तर के मंच पर खड़े होकर कहा—तुम सब एक ही धरती पर पैदा हुए हो। तुम्हारी वर्दी एक है, रुचि और रवायत एक है।

ब : एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हो।

अ : तुम चाहो तो इस नरक को स्वर्ग बना सकते हो।

स : अगर यह नरक स्वर्ग बन गया तो यहाँ रहने वाले सभी स्वर्गवासी हो जायेंगे।

अ : गांधीजी कहा करते थे—जो सहयोग देता है, उसे सहयोग मिलता है।

ब : ईसा ने उपदेश दिया कि यदि कोई तुम्हारे गाल पर चाँटा मारे तो तुम अपना दूसरा गाल भी आगे कर दो।

द : वह काट खायेगा।

स : क्या ?

द : गाल।

ब : (अ से) साला, कंगाल !

अ : सभी धर्म बराबर हैं।

स : बरोबर है।

द : चरित्र बड़ी चीज है।

अ : गौतम बुद्ध ने मनुष्य के उज्ज्वल चरित्र को कीचड़ में खिले हुए कमल

के समान बताया है ।

ब : मनुस्मृति में स्पष्ट लिखा है—आचारहीन न पुनन्ति वेदा । आचारहीन को वेद भी पवित्र नही कर सकते ।

अ : (स्वर ऊँचा उठाकर) महाभारत में निर्देश दिया गया है—एक स्वाद न भंजीत एकस्वार्थेन चिन्तयेत्—मनुष्य अकेला भोजन न करे, अर्थ के लिए अकेला चिन्तित न हो । (सख्ती से) और तुम्म लोग ! तुम्हारा कितना पतन हो चुका है ! इतनी देर से सब्बड-सब्बड खाये चले जा रहे हो । लेकिन—जो व्यक्ति तुम्हारे लिए यह सब लेकर आया, उससे तुमने पूछा तक नही ।

स : तुम मेहमान हो क्या ?

द : जो हम तुमसे पूछें ।

अ : मेहमान तो नही, पर तुम-जैसे अधम जीवों के बीच एक पवित्र, ऊँचा इंसान हूँ ।

ब : अबे फरिश्ते खाँ ! हमे मालूम है, तुम वहीं से खाकर आये हो ।

स : तुम्हें तो यमराज के अग्निकुड में होना चाहिए था । जब तक हम तुम्हारा लाया हुआ सडियल खाना खा न लें तब तक शान्त रहो ।

अ : (सरोष) तुम मुझे शान्त रहने की सीख नही दे सकते ।

द : क्या ? नीति-वाक्य बोलने और लोगों का मगज चाटने का ठेका क्या तुम्ही ने ले रखा है ?

अ : मैं जो कहता हूँ, सच कहता हूँ, सच के सिवा कुछ नही कहता ।

ब : अच्छा, *तो अब सत्यवादिता पर एक प्रवचन हो जाये ।* सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् ब्रूयात्सत्यमप्रियम्—सत्य बोलो, पर प्रिय बोलो । सत्य होते हुए भी सुननेवाले को अप्रिय लगे, ऐसा न बोलो ।

स : (अ से) ऐसा न बोलो ।

अ : अब मैं तुम्हारी इन बातो में आने वाला नही । छोड़ो, यह तसला । **(द को धक्का देता है । स के ठोकर लगाता है । फिर ब से बालटी छीनता है ।)** सारी दाल चाट गये, मुरदे ! अनाज के घुन है । खाते है और हगते हैं ।

ब : तुम क्या पेट मे जमा रखते हो ?

अ : **(गस्से मुँह में ठूँसता हुआ)** यहाँ तो होम करते हाथ जलते हैं । एक तो लंगर की लाइन से खाना लेकर आओ, ऊपर मे बुरा-भला सुनो । जागने तो दो सन्तरीजी को, आज तुम्हारी हड्डी-पसली का चूरमा बनेगा । पुट्ठों पर गरम लोहा न दगवाया तो कहना । बैल की तरह बाँ-बाँ करके चिल्लाओगे, छटपटाओगे और मैं चटखारे लूँगा । तब

तीनो की तिल्ली एकदम शान्त हो जायेगी।

स, द, ब के चेहरे बुझ जाते हैं। वे घुटनों के बल घिसटते हुए, कांपते हुए अ की ओर बढ़ते हैं। अ अहंकार में तन कर खड़ा है। स, द, ब बारी-बारी से उसके पाँवों में माथा रगड़ते हैं।

स, द, ब : (गिड़गिड़ाकर) अन्नदाता।

अ : ज़ोर से बोलो।

स, द, ब : खम्मा अन्नदाता, घणी खम्मा !

अ : और ज़ोर से।

स, द, ब : खम्मा अन्नदाता, घणी खम्मा !

अ : नही, अभी भी आकाश तक गूंज नही पहुँची।

स, द, ब : (चीखकर) खम्मा अन्नदाता, घणी खम्मा !

अ : पूरी ताकत से...।

स, द, ब : (बेतरह गला फाड़कर) खम्मा अन्नदाता—घणी खम्मा !

आवाज़ के अन्तिम सिरे पर तीनों मूर्च्छित होकर ढह पड़ते हैं।

अ : (दर्शकों से) याद रखो, जो तुम्हें अन्न देता है, वही तुम्हारा अन्नदाता है।

स, द, ब : (होश आने पर बुदबुदाते हुए) अमर रहो अन्नदाता, अमर रहो !

अ : अब उठो और मुझे खाना खिलाओ।

तीनों अ के मुंह में कौर देते हैं। वह तसले और बालटी में झांक-झांक कर खाता रहता है। सहसा सन्तरी हड़बड़ाकर खड़ा हो जाता है। अ दुबककर स, द, ब के पीछे छुप जाता है। चारों जने सहमे-सहमे सन्तरी को घूरते हैं।

स : जाग गया, खच्चर !

द : उसकी आँखें बन्द हैं।

ब : (सन्तरी को चलते हुए देखकर) इसे नींद में चलने की आदत है।

अ : बड़बड़ाता भी है।

स : उसके होंटों से लार टपक रही है।

द : लो वो देखो, एकदम लार को सटक गया, सटकूराम !

सन्तरी मंच का चक्कर लगाता है, एक टांग के बल पर। फिर बड़बड़ाने लगता है। अ, ब, स, द पास जाकर उसके हर शब्द को ग़ौर से सुनते हैं।

सन्तरी : ग-प-ज-ह-त-ल-रोटी

म-च-ख-र-क-ट-दाल
जान की बवाल !
प-फ-द-थ-न-ड-वर्दी
ढ-छ-ड-भ-त-दा-ढाल
बस्तर और भोपाल !
अ ब स द—वाहे चेला !
ब स द अ—वाहे चरखा !
स द अ ब—वाहे खादी !
द अ ब स—लाल-लाल-कुर्ता-लाल-धोती-लाल-टोपी लाल !
हाल-चाल-हाल-चाल-हाल-चाल-हाल...।

ब : हमारे हाल-चाल पूछ रहा है।

स : क्या बतायें ?

द : कह दो, मजे मे हैं।

स : (ऊँचे स्वर में) मजे मे हैं।

**सन्तरी अस्पष्ट ढंग से बड़बड़ा रहा है।**

ब : अब क्या कह रहा है ?

अ : कह रहा है, अन्नदाता को प्रसन्न रखो।

स : चोप्प, भड़वे !

द : कैसी विडम्बना है कि हमे रोज-रोज सन्तरीजी का अनर्गल विलाप सुनना पड़ता है।

**सन्तरी धम्म से स्टूल पर जाकर बैठता है। अ, ब, स, द डरकर सिकुड़ जाते हैं। कुछ क्षणों पश्चात वे आश्वस्त हो जाते हैं कि सन्तरी सो रहा है।**

स : (सन्तरी के खर्राटे सुनकर) फिर आकाशवाणी पर सुगम संगीत प्रसारित होने लगा।

अ : हम सन्तरी से इतना डरते क्यों हैं ? वह भी तो एक मनुष्य है।

द : वह एक मनुष्य है ?

अ : और हम भी मनुष्य है।

ब : (शंकापूर्ण) हम भी, मनुष्य हैं !

अ : सब मनुष्य समान हैं।

स : अगर कही भेदभाव है, फासला है तो उसे मिटाना चाहिए।

अ : सन्तरी के बैठने के लिए स्टूल है और हमारे पास यह टाट का टुकड़ा।

स : हम भी स्टूल पर बैठ सकते है।

ब : हाँ-हाँ, क्यों नही ? रोकता कौन है ?

अ : हमें यथास्थिति को भंग करना चाहिए।

स . जड़ता को तोड़ना चाहिए।

द . चाहिए-चाहिए तो ठीक है, चाहिए, लेकिन किया क्या जाये ?

अ : (द से) तुम उठो, पहल करो, अभी उस स्टूल पर जाकर बैठो।

स : स्टूल एक चुनौती है। देखें, कौन इस चुनौती को अगुआ बनकर स्वीकारता है।

द . मेरी आँखों में मोतियाबिन्द है, मुझे स्टूल नजर नहीं आता।

अ हो सकता है, स्टूल पर बैठने से तुम्हारी आँखों में रोशनी आ जाये।

द : मुझे अपने मोतियाबिन्द से प्रेम है।

अ : (स से) तुम नेतृत्व की शक्ति से सम्पन्न हो और स्टूल पर बैठने का साहस दिखला सकते हो।

स . (आतंकित) मैं ? नहीं...।

अ : तुम्हें मिसाल कायम करनी है।

ब : शिलालेखों में तुम्हारा यश स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा कि कभी एक मामूली कैदी सन्तरी के स्टूल पर जाकर बैठ गया था।

स : नहीं। स्टूल पर बैठते ही मेरे दाँत जोर से हिलने लगते हैं। तुम जानते तो हो, उनमें पहले से ही काफ़ी दर्द है।

अ : कभी स्टूल पर बैठे हो ?

स : न—हीं।

अ : फिर तुम्हें कैसे मालूम कि स्टूल पर बैठने से दाँत हिलने लगते हैं ?

स : यह मेरा अनुमान है।

अ . गलत है तुम्हारा अनुमान। (स मुँह बिचकाता है।)

अ : (ब से) तुम्हारा क्या इरादा है ? व्यवस्था के विरोध मात्र से बराबरी का दर्जा नहीं मिलता। बराबर आने के लिए स्टूल पर बैठना होगा।

ब : स्टूल कोई सिंहासन नहीं है, जिस पर बैठकर गर्व महसूस किया जा सके। मैं बड़े परिवर्तन का पक्षधर हूँ और उसकी शुरुआत इन तुच्छताओं से नहीं होनी चाहिए। (रुककर) सम्भव है, तुम्हारे लिए यह महत्त्वपूर्ण उपलब्धि हो। तुम जाकर निस्संकोच स्टूल पर बैठ सकते हो। (व्यंग्यपूर्वक) तुम्हारे बैठते ही मैं ताली बजाऊँगा। तुम समझना, यह कोटि जनों की करतल-ध्वनि है।

अ : (चालाकी से, कतराता हुआ) एकता में बल है। संगठन में शक्ति है। जब कोई भी स्टूल पर बैठने के लिए तैयार नहीं है, तो मैं अकेला दल-बदल नहीं करना चाहता। मैं तुम्हारे विचारों का समर्थन करता हूँ और सौगंध उठाता हूँ कि हमेशा तुम लोगों के साथ टाट पर बैठा

रहूँगा।

द : (एकायक) बर्तन मांजने की बारी किसकी है ?

स : (द से) तुम्हारी।

ब : (स से) तुम्हारी।

अ : (ब से) तुम्हारी।

द : मैंने कल बर्तन मांजे थे।

स : झूठा !

ब : (स से) तुम सदा बारी टाल जाते हो, मलूकदास !

अ : बस, बस, एक-दूसरे के प्रति घृणा मत फैलाओ। मुझे साम्प्रदायिकता से नफरत है। चलो, हाथ मिलाओ। बर्तन मैं मांज लेता हूँ।

द : फरिश्ते हाँ ? हम तुम्हें सलाम करते हैं। (हाथ मिलाते हैं।)

स : मैं तुम्हारी प्रशस्ति में एक महाकाव्य लिखूँगा।

ब : मैं इंडियागेट पर तुम्हारी प्रतिमा स्थापित करने के लिए अभियान छेड़ूँगा। बस तुम ये जूठे बर्तन मांज कर रख दो।

अ : मुझे खुशामद पसन्द नहीं है। मित्रों की संकट से रक्षा करना मेरा सहज गुण है। जब मैं उधर था, उस दुनिया में, तो मेरे एक मित्र को धन की आवश्यकता हुई। मैंने दिन-दहाड़े बैंक को लूट लिया। मेरा एक अन्य मित्र बीमार पड़ा। डाक्टरों ने हाथ झटका दिये। उनके रोग ही समझ में न आया। किसी ने कहा टाइफाइड, किसी ने प्लूरसी, किसी ने टीबी और किसी ने ब्लडकैंसर बतला दिया। तब, अपने मित्र के प्राण बचाने के लिए मैं ज्ञान की परिक्रमा करने लगा और आयुर्वेद में घुस गया। मैंने चरक पढा। मैंने सुश्रुत पढा, मैंने...।

ब : भिषगाचार्य ! सीधे-सीधे कहो कि तुम आज जूठे बर्तन मांजोगे या नही ?

अ चुप होकर सिर खुजलाने लगता है।

स : तुम्हारी नीयत क्या है ?

द : क्यों तुम हमें अपनी अमृतबानी का चिरायता पिला रहे हो ?

अ : (खिसिया कर) बरतन मांजने की जरूरत क्या है ? शाम को हमें ही तो खाना है इनमें खा लेंगे।

ब : आयुर्वेद में शुद्धता का यही वर्णन मिलता है ?

द : इन्ही हरकतो के कारण तो तुम इतने बदनाम हो गये हो।

अ : (नाराजगी से) मैं बदनाम हूँ ? तुम लोग मेरे तलवो की भी होड़ नहीं कर सकते। जेल में जिधर निकल जाऊँ स्वागत और सम्मान होता है मेरा। उस रोज छत्तीस नम्बर की बैरक वाले कह रहे थे, यार, तुम तो

हमारे साथ आ जाओ, रौनक रहेगी। हमे भी अपने अनुभवों से कुछ लाभ उठाने दो। तुम्हें कोई तकलीफ नही होगी। हमें ज्ञान देना और बैठे-बैठे राज करना।

स : फिर जाते क्यों नही हो, छत्तीस नम्बर मे ?

अ : कभी का चला जाता मैं, पर सुपरिटेंडेंट ने कहा, पहले उन तीन निखट्टुओं को सुधारो। तुम्हारे सात्विक जीवन से उन्हे प्रेरणा मिलेगी और वे सही रास्ते पर आ सकेंगे।

**ब, स, द की आँखों में जैसे आग जलने लगती है। वे मुट्ठियाँ तान कर अ की ओर बढ़ते हैं।**

ब : तो तुम सुधारक की हैसियत से हमारे साथ रह रहे हो।

द : ओय-होय सटक-सुधारक जी !

स . यह ज़रूर सुपरिटेंडेंट के कान भरता होगा।

ब · हमारे ख़िलाफ़।

द : चुगलखोर !

स : सन्तरी बनने का जुगाड बिठा रहा है।

द : इस रंगे सियार के मुँह मे कूड़ा भर दो।

ब : भर दो।

स : गोमूत्र पिलाओ इसे, शुद्धिकरण ज़रूरी है।

अ : (भयाक्रांत) मैंने सुपरिटेंडेंट के सामने कभी तुम्हारी निन्दा नही की। जब-जब उसने पूछा, मैंने यही आश्वासन दिया कि अच्छे लोग हैं। मिल-जुलकर रहते है। कड़ी मेहनत करते है। गाली-गलौज करना तो जानते ही नही। अनुशासित रहकर जेल के नियमो का पालन करते है।

ब : कौन माई का खसम करता है जेल के नियमों का पालन ?

स : यह हमारी निन्दा नही तो और क्या है ? प्रशसा ? तुम हमें इतना गया-गुजरा समझते हो ?

ब, स, द : हम तुम्हारे व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर थूकते है। थू, थू, थू !

**तीनों अ पर थूकते हैं, वह चेहरा बचाता है। पीछे हटता है। सन्तरी के एक पाँव और बैसाखी को लाँघ कर दूसरी तरफ़ चला जाता है। उस थुक्काफजीती का कुछ हिस्सा सन्तरी को भी मिलता है।**

ब, स, द : थू, थू, थू !

सन्तरी : (अधसोया-अधजागा) सावन आ गया। फुहारें पड रही है।

**ब, स, द तेजी से अ का पीछा करते हैं। अ अपने को**

बचाता हुआ-सा कई बार सन्तरी की टांग और बैसाखी लांघता है।

सन्तरी : (जाग कर, विस्फारित नेत्रों से देखता हुआ) अभी मेरे ऊपर से कौन निकला ?

अ, ब, स द जहां हैं, वहीं खड़े रह जाते हैं। चुप।

: बोलते क्यों नही ? बताओ किस पवनपुत्र हनुमान ने मेरे शरीर रूपी समुद्र को लांघा और लंका मे पहुँचा।

ब : एक मच्छर था, सन्तरीजी !

स : टिड्डा।

अ : ऊदबिलाव।

स : नहीं, सन्तरीजी ! टिड्डा ही था।

ब : मच्छर। मगरमच्छ जितना बड़ा मच्छर !

सन्तरी : (बैसाखी बजाकर) मच्छर था या टिड्डा ? एक फैसला करके बोलो।

द : वोट ले लो, सन्तरीजी !

ब : (हाथ उठाकर) मच्छर।

स : हाथ उठाकर) टिड्डा।

द और अ हाथ नहीं उठाते हैं।

सन्तरी : तुमने हाथ क्यो नही उठाया ?

द : मैं तटस्थ हूँ।

अ : मैं निर्दलीय। पार्टी-पालिटिक्स से दूर रहना चाहता हूँ।

सन्तरी : तो सदन का यह मत है कि अभी-अभी जब मैं सो रहा था, मेरे ऊपर से एक टिड्डा निकला।

स : जनतन्त्र जिन्दाबाद !

ब : (रुआँसा होकर) सन्तरीजी, सदन मे किसी भी दल का बहुमत नहो है। बराबर-बराबर वोट है।

सन्तरी : अध्यक्ष ने निर्णायक मत का प्रयोग किया।

ब : अध्यक्ष ने ?

सन्तरी : मैंने।

ब : लेकिन सन्तरीजी, आप तो सो रहे थे। आपको क्या मालूम कि मच्छर था या टिड्डा ?

सन्तरी : मैं जब सोता हूँ, मेरा तीसरा नेत्र खुला रहता है।

ब : तीसरा नेत्र ?

सन्तरी : टिड्डा पाँच फुट छह इंच का था।

ब, स, द : (हामी भर कर) था।

सन्तरी : वजन—पैंसठ किलोग्राम।
व, स, द : था।
सन्तरी : पंख कटे हुए।
व, स, द : थे।
सन्तरी . और उस पर बूंदा-बांदी हो रही थी।
व, स, द : (झूम कर) हो रही थी। लगातार हो रही थी।
सन्तरी : वह फुदक रहा था। कभी इधर, कभी उधर।
व, स, द कभी वामपन्थ। कभी दक्षिणपन्थ।
सन्तरी : विवेक खो चुका था।
व, स, द : था।
सन्तरी . मतिशून्य हो चुका था।
व, स, द . था।
सन्तरी : समझदारी को साबुन से धो चुका था।
व, स, द : था।
सन्तरी : था...था...था...। (नृत्य की मुद्रा में) ताक् धिना धिन्, ताक् धिना धिन्, था...था...था...!
अ,व,स,द : (साथ नाचते हुए) था...था...था...!
सन्तरी · (रुक कर) तो यह स्पष्ट हो चुका है कि वह टिड्डा ही था?
अ,व,स,द · टिड्डा।
सन्तरी · पुर्नविचार की गुंजाइश नहीं?
अ,व,स द : नहीं।

एकाएक सन्तरी दहाड़ मार कर रोने लगता है। कैदी पशोपेश में पड़ जाते हैं। फिर एकतान से वे भी सन्तरी को सहयोग देते हैं।

सन्तरी · हाय, हाय, टिड्डा!
चारो . हाय, हाय टिड्डा!
सन्तरी : तुमने...मेरे...साथ...कब...का...वैर...निकालाऽऽ...?
चारो : कब ..का...वैर...निकालाऽऽ...?
सन्तरी · मुझे...नाधने...से पहले...तुमने ..माओ...की...लाल...किताब क्यों नहीं पढीऽऽ...?
चारो : क्यों नहीं...पढीऽऽ...?
सन्तरी पद्मभूषण पंडित प्रताडितलाल...से...शास्त्रार्थ...क्यों नहीं... कियाऽऽ?
चारो : क्यों...नहीं...कियाऽऽ...?

सन्तरी : वाल...मुनीश्वर...से...आशीर्वाद...क्यों...नही...लियाऽऽ...?
चारों : क्यों...नही...लियाऽऽ...?
सन्तरी : तुमने...मुझे...नीचा...दिखलायाऽऽ...।
चारों : नीचा...दिखलायाऽऽ...।
सन्तरी : (रोना बन्द कर अ, ब, स, द से) चोप्प !
चारों : चोप्प !
सन्तरी : तुम लोग क्यो रो रहे हो ?
चारों : (दर्शकों से) तुम...लोग...क्यों...रो...रहे...हो ?
सन्तरी : चोप्प, छछून्दर स्साले !

इस बार चारों सहम जाते हैं।

चारों : सन्तरीजी, तुम क्यो रोये ?
सन्तरी : मैं हमेशा किसी अहम मुद्दे को लेकर रोता हूँ। भारत-पाक विभाजन हुआ, पर मैं नही रोया। नेहरूजी मरे, तब मैं नही रोया। निक्सन राष्ट्रपति चुना गया, तो भी नहीं रोया। राजेश खन्ना और डिम्पल कपाड़िया की शादी हो गयी, लेकिन मैं नहीं रोया। एक दिन मैं सत्ताईस मिनट तक लगातार जागता रहा, पर नही रोया। एलिजाबेथ टेलर ने 'डेंयू डालिंग-डेंयू डालिंग' कहकर मुझे टेलीफोन किया, तो भी मैं नही रोया। लेकिन आज मैं जी भरकर रोया। (रोते हुए) इतना रोया, इतना रोया कि लुत्फ आ गया। (खुश हो जाता है।)
ब : सन्तरीजी, तुम शायद टिड्डे से डर गये।
स : और डरकर रोने लगे।
सन्तरी : नही, मैं टिड्डे से नहीं डरता, डरता हूँ क़यामत गोरखपुरी से।
द : क़यामत गोरखपुरी से ?
सन्तरी : हाँ, उस शायर से। उसका शेर है—टाँग के ऊपर से वो निकले, तो क्या निकले, टाँग के नीचे से निकलें तो मजा आये।
: (नाराज होकर) ये लटके-झटके दिखलाना बन्द करो। मुझे जनानियापन बिलकुल पसन्द नही।
स : नाराज न हो सन्तरीजी, हम तो तुम्हें दाद दे रहे है।
सन्तरी : आज दाद दे रहे हो, कल खुजली दोगे।
अ,ब,स,द : हम अपने शब्द वापस लेते है।
सन्तरी : (सहर्ष) यह मर्यादानुकूल आचरण है। तो, मैं कह रहा था कि यदि एक हजार टिड्डे भी मुझ पर से गुजर जायें तो मैं परवाह नही करता। लेकिन...मैं यह बर्दाश्त नही कर सकता कि कोई मेरे ऊपर से आने-जाने का रास्ता बना ले। सोचो।

अ,ब,स,द : सोच रहे हैं।

सन्तरी : सोचो, आज तो मेरी टाँग के ऊपर से टिड्डा ही निकला। लेकिन अगर यह आम रास्ता बन गया, तो कल यहाँ से साँप निकलेगा, परसों हाथी निकलेगा, अतरसों विद्यार्थियों का जुलूस निकलेगा, और यही हाल रहा तो एक दिन पूरी-की-पूरी इंडियन आर्मी मेरे ऊपर से गुज़र जायेगी ? तब क्या होगा ?

अ,ब,स,द : हम इतनी गहराई में नहीं गये, सन्तरीजी !

सन्तरी : कितनी बुरी बात है कि लोग मुझे रास्ते की तरह इस्तेमाल करें ! मैं तो रास्ते का रोड़ा बनने में विश्वास रखता हूँ। मुझे दुःख है कि इतने वर्ष साथ रहने के बावजूद तुम मेरे सिद्धान्तों को हृदयंगम नहीं कर पाये। मुझ पर आफ़त का पहाड़ टूटा और तुम मूक दर्शक बने रहे। तुमने उस टिड्डे को हिरासत में क्यों नहीं लिया ? सीधा-सादा बलात्कार का केस था। क्या तुम इसी तरह अपनी वफ़ादारी का परिचय देते हो ?

द : शान्त, सन्तरीजी, शान्त ! क्रोध मत करो। क्रोध पाप का मूल है। मैंने टिड्डे को रोकने की कोशिश की थी, पर उसने बताया कि वह तुम्हारा लँगोटिया यार है।

स : फिर मुझे विश्वास था कि वह चाहे भवसागर लाँघ ले, पर तुम्हें नहीं लाँघ सकता।

ब : मैंने उसे सलाह दी थी, कि भाई जान, हमारे सन्तरीजी बहुत नाज़ुक हैं, उनके साथ ज्यादती मत करना।

अ : मुझसे उसने वायदा किया था कि वह तजुर्बेकार है, जो कुछ करेगा, आहिस्ता-आहिस्ता करेगा।

सन्तरी : खैर, मेरे खिलाफ़ जो षड्यन्त्र रचा गया, उसका मुकाबला मैंने बहादुरी से किया। लेकिन... (चिल्लाकर) तुम लोग अब तक क्या करते रहे?

अ,ब,स,द : (आत्मग्लानि में सोचते हुए) हाँ, इतने सालों तक हमने क्या किया ?

ब : हमने विचार-विमर्श किया।

स : तख्ता उलटने के लिए।

द : गद्दारों की सूची बनायी।

सन्तरी : (सकपकाकर) बधाई ! इन ऐतिहासिक कार्यों के लिए तुम्हें बधाई !

अ : सन्तरीजी, इन तीनों को शक है कि मैं तुम्हारा जूता हूँ।

सन्तरी : ने-ने नहीं, यह गलत है। मैं तो खुद जूता हूँ।

ब : फटा हुआ।

स,द : (तेज़ स्वर में) हमारी कुछ माँगें हैं।

सन्तरी : (भिनभनाकर) हमारी कुछ मांगें हैं, ऐ—क्या तुम किसी फ़ैक्टरी के मजदूर हो ? एक उन्नत जेल के उन्नत कैदी होकर तुम ऐसी बातें सोचते हो ? तुम्हारा जीवन विराट संकल्पों को समर्पित है।

ब,स,द : हमारे साथ समानता का व्यवहार होना चाहिए।

सन्तरी : (लाड़ दरशाकर) बुद्धू, बिलकुल बुद्धू हो तुम ! भाग्य से ही कोई बड़ा होता है, कोई छोटा। ज्योतिष, ज्योतिष समझते हो तुम लोग ? मुझे थोड़ा-बहुत ज्ञान है। सब लग्नेश पर निर्भर करता है। जानते हो, कर्क लग्न हो, छठे भाव मे सूर्य हो, चौथे मे शुक्र, दसवें में गुरु और सप्तम स्थान मे बुद्ध हो तो राजयोग बनता है। हमारे शासन-शिरोमणि जेलर साहब की जन्मकुडली में राजयोग है। बिना भाग्य के ही बन गया राजयोग ? एँ ?

ब,स,द : (थके-थके-से) हम कुछ बदलना चाहते हैं। कुछ ऐसा करना चाहते है कि यह अंध-जड़ता, यह एकरसता टूटे।

सन्तरी : बहुत बढिया आइडिया है। मैं भी इस पक्ष मे हूँ कि यह ढर्रा बदलना चाहिए। हुम्म ! क्या किया जा सकता है ? (सोचता है) आहा, बदलेंगे। हम यह ढर्रा बदलेंगे। मेरे पिता कहा करते थे, बेटा, तुम चाहे और कुछ मत करना, पर उल्टी गंगा जरूर बहाना।

स : उल्टी गंगा ?

सन्तरी : देखो, है न इस आइडिया मे नयापन ? हम आज से उल्टी गंगा बहायेंगे।

द : वह कैसे, सन्तरीजी ?

सन्तरी . ऐसे। हाँ, ऐसे। सबसे पहले तुम अपने को ही लो। तुम रोज लकड़ी पर रन्दा चलाते हो, लेकिन...अब तुम यह ढर्रा उलट दोगे, यानी रन्दे पर लकडी चलाओगे। इससे तुम्हारी कार्यक्षमता मे वृद्धि होगी, ऊब मिटेगी और एक नये युग की शुरुआत भी हो सकेगी।

द : सचमुच ? मैंने तो सोचा ही नही था कि नये युग की शुरुआत इस तरह होती है। (खुश होता है और अपनी जगह बैठकर रन्दे पर लकड़ी चलाने लगता है।)

सन्तरी : (स से) तुम्हारा भी उद्धार सम्भव है। तुम सुई और धागे से सिलाई करते-करते तंग आ चुके होगे। अब तुम्हें कैंची से कपड़े को सीने का अभ्यास करना चाहिए। यह एक रोमांचक अनुभव रहेगा। अन्य दर्जियों मे तुम्हारी धाक जम जायेगी।

स : वैसे भी मैं दर्जीपने में वैज्ञानिक दृष्टि का हिमायती हूँ।

तुरन्त कैंची से पायजामा सीने लगता है।

सन्तरी : (ब से) प्यारे भाई, कही की ईंट, कही का रोड़ा, भानुमती ने कुनबा

जोड़ा। अगर भानुमती कुनबा जोड़ सकती है तो तुम अपने दिमाग के पुर्जे क्यों नही जोड़ सकते ? एँ !

ब : जोड़ सकता हूँ।

सन्तरी : शाबाश ! जोडो और कुछ ऐसा करो कि जो इमारत तुम बना रहे हो, उसकी नीव आकाश मे हो और छत की मुंडेर जमीन मे।

ब : (समझने का यत्न करता हुआ) छत की मुंडेर जमीन में, नीव आसमान में...यह तो बड़ा आसान है। (दौड़कर इमारत के ढाँचे को औंधाने लगता है।)

अ : सन्तरीजी ! मैं...तुम्हारा जूता...मुझे क्या करना चाहिए ?

सन्तरी : तुम जादू की अँगूठी को गले मे डालकर गरारे करो।

अ : गरारे ?

सन्तरी : फिर उसे पाँव के अँगूठे मे पहनो। कमर झुकाओ। पाँव ऊपर उठाओ। और अँगूठा मुँह में लेकर चूसो। जैसे अभिमन्यु आम की गुठली चूसता था।

अ : (वैसा ही करते हुए) आम बहुत मीठा है ! सरोली आम, बीजू आम, हापुस और (सन्तरी की तरफ़ देखकर) लँगड़ा आम...!

सन्तरी : (उन्हें काम करते देखकर) श्रम ही जीवन है। श्रम ही मृत्यु है। जीवन और मृत्यु। मैं दार्शनिक होता जा रहा हूँ। लेकिन...(चिल्लाकर) श्रम ही संगीत कहाँ है ? नेहरूजी कहते थे—श्रम आत्मा के तारों को झंकृत करता है। सुनो ! सुनो ! श्रमजीवी साथियो, मैं आज तुम्हारे श्रम की लय मे अपने अन्तर्द्वन्द्व को भूल जाना चाहता हूँ। श्रम का संगीत !

अ, ब, स, द गायक-मंडली के संग लोक धुन में गाते हैं :

तू दुबला क्यों हो गया, रे भाई रामधनिया ?<br>
तुझको क्या चिन्ता लग गयी, भाई रामधनिया ?<br>
रामधनिया, रे भाई रामधनिया !<br>
तेरे घर मे क्या है कमी, रे भाई रामधनिया ?<br>
तेरी गर्दन हिलने लगी, रे भाई रामधनिया ?<br>
कब तक यूँ ही रहेगा ढाँचा<br>
तू हड्डियो का ?<br>
कब तक तेरी आँखों मे<br>
सूनापन बरसेगा ?<br>
टूट गया, पर बना, और अब<br>
कितना टूटेगा, रे भाई, कितना टूटेगा ?

तू तो माटी मे मिल गया, रे भाई रामधनिया !
भिर कर तार-तार हो गया, रे भाई रामधनिया !
तेरी खेती चरते हैं
जंगल के छुट्टे ढोर
कभी इस ओर, कभी उस ओर
जोड़ कुहनियाँ
कस ले मुट्ठी
ऊपर हाथ उठा
सीधा जाकर चढ़ मचान पर
और आवाज़ लगा
तू आंधी का पहला गोट, रे भाई रामधनिया !
तेरे मन मे तनिक न खोट, रे भाई रामधनिया !
रामधनिया, रे भाई, रामधनिया
तू अँगारा बनकर उछल, रे भाई रामधनिया !
तोड़ दे सारा छल-बल-दल, रे भाई रामधनिया !

सन्तरी : चोप्प ! बन्द करो यह पें-पें ।

अ, ब, स, द चुप हो जाते हैं ।

सन्तरी : कौन है ये रामधनिया ? क्या करता है ? बाप का नाम ? पेशा ? मुकाम ? जिला ? तहसील ? कहाँ रहता है ?

ब : रामधनिया किसी आदमी का नाम नहीं है, सन्तरीजी !

सन्तरी : तो कबूतर का नाम है ?

ब : नहीं, एक सख्त, मजबूत पत्थर का । जो हथौड़ों की चोट से भी टूटता नही है । रामधनिया एक आवाज़ है, एक साबुत आवाज—जो अकेले-पन में आदमी की टूटन को जोड़ती है !

राजकुमारी के वेश में युवती का प्रवेश ।

युवती : कौन गा रहा था अभी ? स्वरों का कितना मधुर संयोजन था ! रंग-महल में मुझे गीत की कुछ पंक्तियाँ सुनायी दी और मैं मन्त्रमुग्ध हो गयी ।

सन्तरी : (हड़बड़ाता-लड़खड़ाता हुआ राजकुमारी के पैरों में गिरकर) राज-कुमारीजी, आज इस जेल के भाग खुल गये । ऐसे खुल गये, जैसे पकने पर पपीता खुल जाता है ।

युवती : (अपने में खोयी-खोयी) मैंने रथ मँगवाया और चल पड़ी । बन्दीगृह के पास आकर मुझे स्वरों का रहस्य ज्ञात हुआ । मैं क्षण-भर का विलम्ब किये बिना अन्दर चली आयी । कौन गा रहा था यहाँ ?

सन्तरी : ये-ये क़ैदी। मैं सन्तरी हूँ। मैंने इनको हुक्म दिया था कि कोई ऐसा गीत गाओ जिसे सुनकर राजकुमारीजी की तबीयत फड़क उठे।

युवती . ओह! कितनी थकी हुई हूँ मैं! रक्त जैसे रगों में है ही नहीं। राजवैद्य की शक्तिवर्द्धक औषधियों से, सम्भवत, कुछ दिनों में लाभ हो। (अ, ब, स, द से) तुम लोग इस तरह गुमसुम क्यों बैठे हो? कुछ गाओ न। तुम्हारा गायन सुनने के लिए ही तो मैं यहाँ आयी हूँ। क्या सुनाओगे इस बार?

अ, ब, स, द चुप रहते हैं। स्थिर और निरुत्तर।

सन्तरी : (नाराज होकर) यों मुँह क्यों लटका रखा है? अभी तो आठवें सुर से तेरहवें सुर तक रस्साकशी कर रहे थे। अब क्या हो गया? गाओ। राजकुमारीजी तुम्हें इनाम देंगी।

अ, ब, स, द उसी तरह बैठे रहते हैं।

युवती : संगीतालय में कुछ गायकों के पद रिक्त हुए हैं। यदि तुम कलावन्त सिद्ध हुए तो वहाँ नियुक्त किये जा सकोगे।

सन्तरी : समझे? फिर जेल से छुट्टी। गाओ, तम्बूरो, गाओ! (क़ैदियों पर कोई प्रतिक्रिया न देखकर, धीमे से) गाओ, मेरे पिताओ! गाओ। मेरी भी तरक़्क़ी का सवाल है। जाड़े में तुम्हें ऊनी कोट दिलवाऊँगा (कुछ असर न पाकर) तो अब मैं दस गिनता हूँ। अगर फिर भी तुम लोगों ने मुँह नहीं खोला तो सोच लेना, इसी वक़्त मौत के हवाले कर दिये जाओगे। एक-दो-तीन-चार-पाँच-छः-सात-आठ-नौ-दस-दऽस-दऽस...।

क़ैदी अप्रभावित हैं।

युवती : पहले इन्होंने किस प्रसंग पर गाना शुरू किया था?

सन्तरी . (याद करता हुआ) उस समय—क्या प्रसंग था? (सहसा याद आता है और वह बेसाख़्ता पटकता हुआ चिल्लाने लगता है।) श्रम का संगीत, श्रम का संगीत, श्रम का संगीत! मेरे श्रमजीवी साथियो! श्रम आत्मा के तारों को झंकृत करता है। श्रम ही सच्चा संगीत है!

क़ैदी मानो मूर्च्छा-भंग की स्थिति में आते हैं और अपने-अपने औज़ार सम्भालकर काम करने लगते हैं।

सन्तरी : उल्लुओ, बोलो! छेड़ो आज श्रम का संगीत, कुछ तो शरम करो। श्रम का संगीत।

गायक-मंडली अचानक तल्ल स्वरों में गुनगुनाती है। फिर अ, ब, स, द भी अपने-अपने काम में लीन उसके साथ गाते हैं :

जोधा सूरज देखता है
कितने रंग खिले रण-थल में
देखता है—
जोधा सूरज, हो।
किसने जीत लिया भय को
किसने संशय को ?
किसने पाँखुरियों को लोह-कवच पहनाया ?
किसने अपने हाथों को हथियार बनाया ?
जोधा सूरज देखता है
कितने फूल जुड़े आँचल में
देखता है—
जोधा सूरज, हो।
कौन शाप से
कौन पराजय से जूझेगा ?
कौन समय को बांध सकेगा ?
छोटे पल में
कौन ला सकेगा गुलेल की चोट
अमल में
जोधा सूरज देखता है।
किसने हंस तिरे दलदल में
देखता है—
जोधा सूरज, हो।

युवती : सुन्दर, अति सुन्दर ! तुम लोगों ने गायन-विद्या का प्रशिक्षण कहाँ लिया ?

अ : चौराहों पर।

ब : कसाई की छुरी के नीचे।

स : नरबलि की पवित्र वेदी पर।

द : सत्संग-गोष्ठियों में।

सन्तरी : सच तो यह है, राजकुमारीजी, कि जब ये यहाँ आये थे, तब गाना तो क्या रेंकना भी नहीं जानते थे। मैंने इन्हें सुर-ज्ञान दिया। पहले ध्रुपद बजाना सिखलाया, फिर ठुमरी नाचना और कथकलि गाना बतलाया। मेरे दादा अल्लादिया खाँ के शिष्य रहे। राग मँहगाई के तो वह बेजोड़ वक्ता थे।

युवती : राग मँहगाई के वक्ता ?

सन्तरी : हाँ जी, आन्दोलन और अनशन नृत्य में भी कोई उनकी बराबरी नहीं कर पाया। वह बैठे-बैठे नाचते थे और नाचते-नाचते बैठ जाते थे। गजल, दादरा, यमन कल्याण सब नाचते थे।

युवती : (क्लान्त स्वर में) ओह, मेरे अंग शिथिल होते जा रहे हैं। माथा चकरा रहा है। हाथ-पाँव काँप रहे हैं।

सन्तरी : स्टूल पर बैठ जाइये, राजकुमारीजी ! यह राज-काज की थकान होती ही ऐसी है।

युवती : नहीं...यह...प्रसव...की...की...थकान...है।

सन्तरी : प्रसव की ? मतलब—जचगी की ?

युवती : हाँ, मैंने रात पाँच पुत्रों को जन्म दिया है।

सन्तरी : एक साथ ? पाँच (अँगुलियों पर गिनता है, फिर एक अँगुली दाँतों से काट लेता है) किन्तु राजकुमारीजी, आपका तो स्वयंवर होनेवाला था।

युवती : होनेवाला था, पर अब नहीं होगा। रात को अचानक दर्द शुरू हुआ और मैंने पाँच रत्न पैदा कर दिये। हीरा, मोती, पन्ना, पुखराज और नीलम !

अ, ब, स, द यांत्रिक ढंग से ठहाका लगाकर हँसते हैं, फिर तत्काल गुमसुम हो जाते हैं।

सन्तरी : (अस्त-व्यस्त) कुँआरी...राजकुमारी...पाँच...पुत्र...नहीं, यह सम्भव नहीं।

युवती : क्या सोच रहे हो ?

सन्तरी : सोच रहा हूँ कि अब नया राजा कौन बनेगा ? पहले तो यह तय हुआ था कि जिससे राजकुमारीजी का विवाह होगा, वह राजपाट संभालेगा।

युवती : मैंने निश्चय किया है कि मेरे पाँचों पुत्र, समान रूप से, राज्य के शासक रहेंगे। चार चारों दिशाओं में और पाँचवाँ केन्द्र में। सत्ता के विकेन्द्रीकरण से ही सच्चा लोकतन्त्र पनपता है।

सन्तरी : चमत्कार ! यह तो चमत्कार ही हो गया। न विवाह, न गौना, न टटका, न टोना और एकदम सन्तान-प्राप्ति !

युवती : इसमें आश्चर्यजनक कुछ भी नहीं। अपनी-अपनी सुविधा है।

सन्तरी : (हौले से) चरित्रहीनता ! (खँखारकर) राजकुमारीजी, शकुन्तला ने दुष्यन्त से गन्धर्व-विवाह किया था न। कुछ वैसा ही तो नहीं हो गया, याद कीजिये।

अ,ब,स,द : (यकायक) गन्धर्व-विवाह !

नेपथ्य में बादलों की गड़गड़ाहट।

अ : राजकुमारी का—

ब : विवाह नहीं हुआ।

स : और पाँच पुत्र—

द : पैदा हो गये।

अ : भ्रूण हत्या—

ब : कायरता है।

स : जीव-रक्षा—

द : परमो धर्मः।

तभी आकाश से पुष्प-वर्षा। सब जने विस्मय से भर उठते हैं। कुछ क्षण बाद, हवा में लहराते हुए रंगबिरंगे वस्त्र गिरते हैं। अ, ब, स, द उन वस्त्रों को पहचान जाते हैं और हर्ष-विभोर होकर एक-दूसरे के गले लगते हैं। फिर वे क़ैदियों वाली वर्दी उतारकर फेंक देते हैं और रंगीन वस्त्र पहनते हैं। नगाड़ा हल्के-हल्के बजता रहता है। गायक-मंडली गाती है :

अन्तर-जन्तर हो छू-मन्तर
बन गन्धर्व
चला जा सपनों की दुनिया में
यह रेशम के
कोमल धागों का षड्यंतर—
अन्तर-जन्तर हो छू-मन्तर, हो छू-मन्तर।
जब हो युद्ध शुरू...
अगन और धुआँ भरा हो आसपास में
कोई हरियाली का
झूठा मोह ढूंढ ले
खोह ढूंढ ले—जहाँ दुबककर तू
अपने को बचा सके
और भुला सके आकंठ यातना !
सुन्दर वेश पहनकर बिम्ब निहार—
धार से दूर भाग जा
तन का दैन्य उतार—
प्यार कर सिर्फ स्वयं से, छिः छिः !
ओ मनुष्य !

ओ छद्मरूप गन्धर्व
देख यह काल-कलन्तर
उथल-पुथन्तर
गिरत-पडन्तर
अंतर-जंतर हो छू-मंतर, हो छू-मंतर।

गायन की समाप्ति तक अ, ब, स, द गन्धर्व-वेश धारण कर चुके हैं।

अ,ब,स,द : राजकुमारी, हम तुम्हारे प्रति कृतज्ञता प्रकट करना चाहते हैं।

युवती : क्यों ? कौन हो तुम लोग ? यह क्या अद्‌भुत लीला है ?

अ,ब,स,द : हम गन्धर्व है, राजकुमारी ! देवराज इन्द्र के शाप के कारण हम नरक की यातना भोग रहे थे। आज हम शाप-मुक्त हुए।

युवती चकित है। एक बार फिर मेघ-गर्जना होती है और कुछ वस्त्र सन्तरी के सिर पर गिरते हैं। वह चौंकता है, फिर खुश होकर बैसाखी और बन्दूक परे फेंक देता है और नये वस्त्रों को पहनता हुआ अब वह 'ह' का रूप ग्रहण कर रहा है। उसका लँगड़ापन खत्म हो गया है। गायक-मंडली उसके मनोभावों को प्रकट करती है :

कौन था भीडिया
कौन हो तुम
सुनो, आदमी की ओ दुम !
क्या पाया, क्या खोया तुमने रेल-पेल में
जीत-जीत कर हारे हरदम
खेल-मेल में
चुगली, गाली, साजिश का सन्ताप जेल में !
कौन था भीडिया
कौन हो तुम
अबे आदमी की अडदुम !
अब तुमको होना है अपने में ही गुम
गुम और गुम
गुम और गुम
गुमगुम गुमगुम गुमगुम
तड़छुम तड़छुम तड़छुम !
कौन था भीडिया, कौन हो तुम ?
गुमसुम तड़छुम तड़भुम

गुमसुम तड़छुम तड़भुम

ह गन्धर्व बनकर बेसुध-सा नाच रहा है।

युवती : सन्तरी को क्या हो गया है ?

अ,ब,स,द : यह भी गन्धर्व है, राजकुमारी, पाँचवाँ गन्धर्व। ग्राज देवताओं ने हम पर पुष्प-वृष्टि की, हमे गन्धर्व-वेश लौटाया। हम शापमुक्त हुए।

युवती : इन्द्र ने तुम्हें शाप क्यों दिया था ?

अ : हमसे भूल हो गयी थी, राजकुमारी !

ब : हमने अपने साथ की अप्सराओं से, यानी सुविधापन्थी नीतियों से अनैतिक सम्बन्ध स्थापित कर लिये थे।

स : वे गर्भवती हो गयीं।

ह : जब देवराज इन्द्र को पता लगा तो वह क्रोधित हो उठे। उन्होंने उसी क्षण हम पाँचों को शाप दिया कि जाओ, मृत्युलोक में घोर दुःख भोगो।

स : हम सब रोने लगे। अप्सराएँ...।

द : जो अफसरों की अवैध कन्याएँ थी और कॉलेज मे हमारे साथ पढती थी...।

ब : मर्मभेदी रुदन करने लगी।

अ : उनके गुमनाम पेरेंट्स ने इन्द्र पर भारी दवाव डाला।

द : कहा कि कानूनी तौर पर गर्भपात जायज है।

ह : तब भुक्तभोगी राजा इन्द्र का हृदय पिघला...।

स : जैसे छात्र-छात्राओं को न देखने योग्य स्थिति में देखकर कुलपति का हृदय पसीज उठता है।

ब : प्रयाण के समय...

द : यानी कन्वोकेशन के अवसर पर कुलपति ने ..

ह : इन्द्र ने...

अ : जीवन-संग्राम में सफल होने के...

ब : मुक्ति प्राप्त करने के...

स : कुछ गुर हमें बताये।

द : इन्द्र बोले, जब तुम्हारा किसी ऐसी अविवाहित कन्या से साक्षात्कार होगा, जिसने एक साथ पाँच पुत्र उत्पन्न किये होंगे, तो उसके दर्शन मात्र से तुम शापमुक्त हो जाओगे।

ह : आज हम शापमुक्त हुए।

अ,ब,स,द : हम तुम्हारे उज्ज्वल चरित्र की अलौकिक आभा से पुन: गन्धर्व रूप पाने में सफल हुए।

युवती (खिलखिलाकर) तो—ये—पाँचों गन्धर्व तुम्हीं हो! मैं एकाएक तुम्हें पहचान नहीं पायी। सुविधा की राजनीति में तुम्हारा पतन हुआ। तुमने शाप भोगा, लेकिन विकल्पहीन बने रहे और फिर राजसत्ता के चक्रव्यूह में आ गये।

मेघ-गर्जना। पुष्प-वर्षा। युवती पर एक झीना-सा वस्त्र गिरता है। वह उसे ओढ़ लेती है। धीरे-धीरे गायक-मंडली का स्वप्न-गीत उभरता है :

एक झिलमिला स्वप्न का आकार...
ढँक लेता दिशाओं को!
जिस तरह उजड़े हुए, टूटे दरख्तों पर
उनींदी बर्फ गिरती है
एक छलना, धुन्ध का विस्तार...
ठग लेता हवाओं को!
ढँक लेता दिशाओं को
एक झिलमिल स्वप्न का आकार!
जिस तरह बुझती हुई लौ को
अँधेरा
बाँध लेता है शिकंजे में
एक सुख की कामना का हार...
डसता है भुजाओं को!
एक झिलमिल स्वप्न का आकार...
ढँक लेता दिशाओं को!

युवती, अ, ब, स, द और ह को लुभाती हुई-सी मंच पर डोलती है।

अ,ब,स,द : *(हतप्रभ) तुम यहाँ?*

द,ह : राजकुमारी के रूप में?

युवती : पहचान लिया न मुझे? कितनी अभागी हूँ मैं कि सिर्फ मातृत्व की लालसा के कारण मुझे इन्द्रलोक से निष्कासित होना पड़ा।

ब : मातृत्व की लालसा?

युवती : हाँ, अन्य चारों अप्सराएँ तो गर्भपात के बाद स्वस्थ हो गयीं और इन्द्र-सभा में जाने लगीं। किन्तु मैंने नौ महीने कष्ट सहे और एक पुत्र को जन्म दिया। ऐसा पुत्र जो कर्ण बन सकता था। स्वजनघाती, बन्धु-विरोधी, दानी, ज्ञानी पर—सत्ताकामी। देवराज को जानकारी मिली तो वह आग बबूला हो उठे। नवजात शिशु को समुद्र में फिंकवा

दिया। मुझे शाप दिया कि जाओ, राजकन्या के रूप में मानवी देह प्राप्त करो। मैंने पूछा—महाराज, मैं कब तक ऐसे रहूँगी? इन्द्र बोले—एक समय आयेगा, जब पाँचों पतित गन्धर्व तुमसे मिलेंगे। उनकी काम-दृष्टि के सम्पर्क मात्र से तुम, अविवाहित अवस्था में, गर्भ-धारण करोगी। तुम्हारे पाँच पुत्र पैदा होंगे और गन्धर्वों से पुनः साक्षात्कार होते ही तुम मुक्त हो जाओगी।

ब : तो तुम्हारे पुत्र-रत्न हमारी कामदृष्टि के ही फल हैं।

स : आज तक ऐसा सुना तो नही...।

द : कि पुरुष की नज़र पड़ने मात्र से ही कोई स्त्री प्रेगनेंट हो जाये।

अ : यह होने लगा तो समस्त नारी-जगत का सतीत्व खतरे में पड जायेगा।

ह : (युवती से) जो हो गया, सो हो गया, पर अब इन्द्रलोक लौटने से पहले तुम्हें आपरेशन करा लेना चाहिए।

स : आगे के लिए आराम हो जायेगा...।

ब : फिर चाहे दृष्टि-सम्पर्क हो या देह-सम्पर्क।

युवती : मुझे आपरेशन से डर लगता है।

द : सोच लो, कहीं इन्द्रलोक में फिर कुछ गड़बड हो गयी तो फिर वही शाप ढोना पड़ेगा।

युवती : यहाँ की एक नर्स ने मुझे बतलाया था कि आजकल इन्द्रलोक में भी फ़ैमिली प्लानिंग के उपकरणों की खपत बढ़ गयी है। उनकी सप्लाई मृत्युलोक से होती है।

अ : तब तो हमारी पाँचो अँगुलियाँ—

स,ह,द,ब : तुम्हारे ब्लाउज़ में है।

अ : चलो भई, अब इन्द्रलोक चलो। मुझे लखनऊ और बनारस के कोठो में शृंगार करती हुई सुकुमार अप्सराओं की याद आ रही है।

ब : रुको, ज़रा देवराज का गुणगान तो कर लें।

स : अरे, देवराज इन्द्र के गुणगान से क्या होगा, दर्शकों का गुणगान करो।

द : जिन्होंने धीरज का दुशाला ओढकर तुम्हारा नाटक देखा।

ह : प्रणाम करो प्रेक्षागृह की छत को—

युवती : जो इतना झूठ सुनने के बाद भी तुम पर टूट कर गिरी नहीं।

अ : धन्यवाद दो ध्वनि-यंत्र और प्रकाश-तंत्र को...

ब : जो नाटक के असफल दृश्यों को भी सफल बनाने में सक्रिय रहे।

सब हाथ जोड़ते हैं। तभी नगाड़ा बजता है। ताल पर पाँव मिलाते हुए सभी पात्र मंच की इस तरह परिक्रमा करते हैं मानो उनके पंख लगे हों। फिर अ, ब, स, द, ह पार्श्व में

से क्रमशः लाल, हरे, पीले, नीले और सफ़ेद ध्वज लाकर प्रतिष्ठित करते हैं। युवती के हाथों में दो रंगीन झंडियाँ हैं।

अ : देखा तुमने, नाटककार के बच्चे को ! हमें ऐसी स्थिति में लाकर छोड़ दिया है कि न घर के रहे न घाट के।

ह,ब : यथार्थ से उठाकर स्वप्न की गोद में रख दिया और नाटक खत्म। जयशंकर प्रसाद से लेकर मोहन राकेश तक यही चालू फार्मूला !

युवती : मैं तो पहले ही जानती थी कि ऐन वक़्त पर मणि मधुकर महाराज पलायन कर जायेंगे और पात्रों को प्रेत, गन्धर्व या पीर बना देंगे।

स,द : लेकिन हम सिर्फ सम्वाद बोलने वाले पात्र नहीं हैं, मनुष्य हैं।

अ,ह,ब : हमें गन्धर्व-रूप देकर लेखक ने मानव-मूल्यों का अपमान किया है।

युवती : जब-जब हमने समस्याओं से सीधे जूझना चाहा, लेखक ने हमें शब्द देने से इनकार कर दिया।

स : जब हम संघर्ष के चरमोत्कर्ष में पहुँचकर कुछ करना चाहते थे तो निर्देशक दगा दे गया और पट्ठा कैंटीन में जाकर चाय पीने लगा।

न : निर्देशक भाड़े का टट्टू है और मनोरंजन-मार्गी संस्थाओं के हाथों बिक चुका है।

अ,ब,स,
द,ह : हम लेखक और निर्देशक की मिली-भगत का विरोध करते हैं।

युवती : और यह प्रतिज्ञा लेते हैं—

ब : कि भविष्य में...

स : ऐसा कोई नाटक नहीं खेलेंगे—

ह,द : जिसमें हम मनुष्य न रहकर गन्धर्व बन जायें।

स,ब : (एक साथ) हम गन्धर्व नहीं हैं। हम मनुष्य हैं और यह मानते हैं कि युद्ध में न देवताओं की विजय होती है, न दानवों की—मनुष्य के संकल्पों की विजय होती है !

सब गायक-मंडली के साथ गाते हैं :

जय हो, मानुष महाबली की जय हो !
जागे सृजन-ज्योति
तम का क्षय हो
जग का पंथ सदा हो, कल्याणमय !
उभरे—साहस, अग्नि, शक्ति जन की
टूटें—काल-बेड़ियाँ बन्धन की
खोलें — रस का रहस्य रंगजीवी
जग का पन्थ सदा हो, कल्याणमय !

अ : (आगे बढ़कर) तो दर्शकगण क्षमा करें ! अब हमारा अपना नाटक शुरू हो रहा है। सही नाटक !

ह,व : इसमें न किसी लेखक के चुटकुले हैं, न निर्देशक के चोंचले।

द,स : और इस नाटक मे आप भी भागीदार हैं।

युवती : तो अब पर्दा उठाओ—

ह,व : दर्शकों की आँखों पर से !

युवती : रोशनी डालो—

द,स : चर्बीदार चेहरो और मुखौटों पर !

अ : और असरदार आवाज़ें कसो—

युवती : उन आदमखोर भेड़ियों पर—

व,द,स,ह : जो आदमी की आवाज़ सुनना ही नही चाहते।

अ : वाकई, अब नाटक शुरू हो गया है। पर्दा उठ चुका है और लोग—अपने-अपने आईने में अपना-अपना चेहरा ढूंढ़ रहे हैं। हमारी कामना है कि यह तलाश हमेशा जारी रहे !

युवती : तो अब— मैं—तीन बार 'जयहिन्द' कहूँगी और आप उसे दोहरायेंगे—जयहिन्द ! (दर्शक दुहराते हैं) और जोर से। जयहिन्द ! (दर्शक व अन्य पात्र चीखते हैं पूरी ताकत से) जयहिन्द !

**इस बार कर्णभेदी कर्कश स्वर फूटते हैं और गायक-मंडली निर्माण एवं घृणा की धुनों मे कुछ गाने लगती है।**

**पर्दा गिरता है।**